जब सृष्टि का प्रारम्भ होता है, तो उससे पूर्व आत्मा, उस प्रभु से अनुरोध करता है कि प्रभु कर्म करने के लिए सृष्टि उत्पन्न करो। सृष्टि उत्पन्न होने के पश्चात, एक समय ब्रह्मा देवताओं के द्वार पर पहुंचे। ब्रह्मा के चरणों को स्पर्श करते हुए देवताओं ने कहा कि भगवन! हमारे कल्याण के लिए कोई मार्ग निर्णय कीजिए।

उस समय ब्रह्मा जी ने अपने मुख से इस **संध्या** को उत्पन्न किया और कहा कि हे देवताओं! यह जो सन्ध्या मैंने तुम्हारे लिए उत्पन्न की है इसका अनुकरण करो। यह सन्ध्या तुम्हें और भी देवता बना देगी। आज तुम दूसरों का आदर करके देवता बने हो, परन्तु इस सन्ध्या को, जो मेरे मुखारविन्द से उत्पन्न हुई है इसका अनुकरण करो।

हे परमात्मन! तू कल्याण करने वाला है। हे सन्ध्या! तू कल्याण करने वाली है। आज हमें सन्ध्या का पूजन करना है। सन्ध्या के गुणों को अपने में धारण करना है। हमें माता दुर्गे की याचना करनी है। हे माता! तू अष्ट भुजों वाली और कल्याण करने वाली है। तू आ और हमारा कल्याण कर।

जो प्रातःकाल में सन्ध्या का अनुकरण करते हैं और सन्ध्या में कहते हैं **प्रातरग्नि** हे विधाता! हमारी रक्षा करो। आज हम अपनी रक्षा चाहते हैं यह जीवन आपका है। यह शरीर आपका है। मनुष्य सब ही कुछ परमात्मा के अर्पण कर देता है। उस समय मनुष्य का हृदय निर्मल और स्वच्छ हो जाता है आत्मा के द्वारा जो मल, विक्षेप आवरण पाप कर्मों द्वारा, दुष्ट कर्मों द्वारा आ जाते हैं वे उस प्रकाश से सब शान्त हो जाते हैं जैसे एक वस्त्र हैं और उसमें बड़े ही दोष हैं परन्तु जब वह जल के समीप जाता है तो जल उसे निर्मल और स्वच्छ बना देता है। इसी प्रकार हमें भी अपनी आत्मा के द्वारा जो मल विक्षेप आवरण हैं उनके शान्त करने के लिए हमें सबसे पूर्व माता सन्ध्या का पूजन करना है। उसके पाठ को करना है। जिससे हमारा वास्तविक कल्याण हो जाएगा।

आज सुन्दर समय में परमपिता परमात्मा ने हमें इन वेद मन्त्रों के उच्चारण करने का सुअवसर दिया । आज इस अमृतबेला में उस गान को गाएं, जिससे हम देवता बन जाएं देवता जन प्रातःकाल में कैसे अमृत को पान किया करते हैं हे प्रातःकाल की अग्नि! तू हवि है । तू हव्य पदार्थों को उत्पन्न करने वाली है । तू हमें हव्य पदार्थों को पान करा, जिससे हम देवता बन जाएं और देवता गणों के समाज में विराजमान होकर देव वाणियों को विचारें, जिससे हमारी विचारधाराएं हर स्थान में देववृत्ति ही बनी रहे ।

आज इस प्रातःकाल में प्रभु का गुणगान गाएं हे परमात्मन्! तू कल्याण करने वाला है । तुने हमारे कल्याण के लिए नाना सामग्री उत्पन्न की है । हे प्रभु! हम आपसे कल्याण चाहते हैं । इस संसार को नियम से बनाने वाले, हे इन्द्र! हमारे जीवन को भी नियमित बना । जब हमारा जीवन नियमित होगा, तो हम सब कुछ कार्य कर सकेंगे । आपने प्रातःकाल में सूर्य को उत्पन्न किया है, इसी प्रकार हे देव! हम उस महान ज्योति को चाहते हैं जिससे हमारा आत्मिक कल्याण हो । वह महान ज्योति हमारी सन्ध्या की व्याहृतियां हैं जब सन्ध्या की व्याहृतियों को जाना जाता है तो वह सन्ध्या वास्तव में हमारा कल्याण करा देती है । जब देवता सन्ध्या के द्वार पर जाते हैं तो सन्ध्या पुकार कर कहती है कि हे देवताओं! यदि मेरा आदर करोगे, अनुकरण करोगे तो तुम संसार में देवता बन जाओगे यदि तुम मुझे ठुकराओगे तो तुम संसार में ठुकराए जाओगे ।

सबसे प्रथम जब **आत्म लोक** में प्रवेश करता है, आत्म लोक में जब जाता है तो वह तीन आचमन करता है।

आदि ऋषियों ने विराजमान हो करके सबसे प्रथम कहा कि मानव को तीन आचमन करने चाहिए। **तीन आचमन** क्यों करता है प्राणी? आचमन इसलिए करता है कि त्रिविद्या की वह महान महत्ता में रमण करने वाला बने और त्रिविद्या को पान करने वाला जो होता है वह ब्रह्मणाः वृत्तम देवाः, वह

ब्रह्म वस्तुतिः वृत्तः देवा अभ्यम् गति नानश्चतः। वेद का आचार्य कहता है कि वह जब आचमन करता है तो वह त्रिविद्या का पान करता है और त्रिविधा क्या है? जैसे शीतल जल मानव के कण्ठ में शान्ति स्थापित करता है, मानव का कण्ठ शान्त हो जाता है। इसी प्रकार यह जो त्रिविद्या है इसको हम ज्ञान, कर्म और उपासना कहते हैं। ज्ञान, कर्म और उपासना ही तीन आचमन कहलाये जाते हैं। सबसे प्रथम वह ज्ञान में जाता है।

तो वह तीन आचमन करता है। आचमन का अभिप्राय त्रिविद्या को धारण करने वालों में नाना ब्रह्मवेत्ता हुये हैं। परन्तु आज का विचार क्या? मुनिवरों! देखो, तीन आचमन करता है। आचमन करने के पश्चात सर्वत्र जो इन्द्रियाँ हैं मानव के शरीर में, इन इन्द्रियों के ऊपर वह अपना आधिपत्य करता है।

आज सबसे पूर्व अपने को बनाना है । जब मनुष्य **शन्नो देवी** का पाठ करता है तो कहता है हे देवी! तू कल्याण करने वाली है । तू हमारे कंठ में आ समा । जैसे जल हमारी तृषा को शान्त कर देता है उसी तरह हमारा कंठ उस जल रूपी तृषा का इच्छुक न रहे । **हे शन्नो देवी!** हम तो उस आनन्द के इच्छुक है । जैसे जल शीतल बना देता है उसी प्रकार **हे शन्नो देवी!** तू आ और हमारे कंठ में विराजमान हो । हे माता! हमारा कंठ मधुर बने, सुन्दर बने । जिससे हे माता! हमारे कंठ में जो वार्त्ता होगी, यथार्थ होगी । और वह अन्तकरण तक जाएगी । हमारे द्वारा जो मल, विक्षेप आवरण हैं **हे शन्नो देवी!** वे मेरे शांत हो जाएंगे । जैसे जल से तृषा शान्त हो जाती है उसी प्रकार ज्ञान से हमारे मल, विक्षेप आवरण शान्त हो जाएंगे । जब ज्ञान का प्रकाश हो जाएगा तो अन्धकार कहा रहेगा । जैसे रात्रि को शान्त करने वाला सूर्य प्रातःकाल में आता है और रात्रि का नाश कर देता है इसी प्रकार हे शन्नो देवी! तू वाणी में विराजमान हो जाएगी और वाणी का प्रभाव अन्तःकरण तक जाने के पश्चात मल विक्षेप आवरण जो हमारे पापों से

बन चुके हैं वह सब शान्त हो जाएंगे । हे माता! हम तुझसे अनुरोध करते चले जा रहे हैं संध्या में सबसे पूर्व हमें अपने को बनाना है ।

सन्ध्या की तीन व्याहृतियां होती हैं, एक अपने को बनाना है कि मैं कौन हूँ और मैं कैसा बनूं? मेरा हृदय कैसा बने, आज मेरा कंठ कैसा बने? मेरे चक्षुः, मेरे श्रोत्र, मेरी घ्राण कैसी बने? मेरी त्वचा यह सब ही कुछ कैसे बने । अपने को परमात्मा के समर्पण कर दो । प्रत्येक इन्द्रिय के विषय को जानो । पहली व्याहृति यह है ।

द्वितीय व्याहृति वह है कि हम परमात्मा की सृष्टि का प्रकरण लेते हैं हम परमात्मा का गुणगान गाते हैं, हे परमात्मा! अब हम आपके पात्र हुए हैं मैंने आज से पूर्व काल में कहा है कि परमात्मा के गुणगान गाने के लिए तुम पात्र बनो । जैसे यज्ञोपवीत लेने से पूर्व पात्र बनो । उसके पश्चात तुम किसी की याचना कर सकोगे । आज जैसे किसी द्रव्यपति के द्वारा कोई सेवक है । और किसी काल में अपने स्वामी से कहता है कि मेरा जो वेतन है, वह मुझे दो । तो वह वेतन किस काल में प्राप्त करता है? वह उसी काल में प्राप्त करता है जब वह पात्र बनता है । इसी प्रकार हमें सबसे पूर्व अपने को बनाना है और अपने को जानना है । जब हम अपने को जान जाएंगे, तो उसके पश्चात हम परमात्मा के गुण गाने योग्य होंगे, प्रभु का गुणगान गाएंगे तो एक समय वह आएगा कि प्रभु हमारा रक्षक बन जाएगा । जब प्रभु हमारा रक्षक बन जाता है तो उस काल में वह हिंसक प्राणियों से, जो हमें कष्ट देने वाले हैं उनसे हमारी रक्षा करता है । तो आज सबसे पूर्व हमें पात्र बनना है और सब कुछ परमात्मा के अर्पण कर देना है ।

हे आपो! तू तो मेरा जीवन है। हे आपो! जब यज्ञमान जब अपनी यज्ञशाला में विद्यमान होता है, तो आपो को ले करके वह आचमन करता रहता है। क्यों करता रहता है? कि तू शीतल है, अमृत है, महान् है, विज्ञान है श्रोत्रीय है और तू ही आपो बन करके बिन्दु रूप कहलाता है तू ही बिन्दू

रूप कहलाता है जिसको जान कर, मानव एक महानता की वेदी पर लाता है।

मानव संध्या काल में विराजमान होता है सबसे प्रथम वह अपनी इन्द्रियों को स्पर्श करता हुआ अपनी इन्द्रियों के विषयों को जानता हुआ और परमात्मा से अपना तन्मय करता हुआ वह कहता है **हे प्रभु! मेरी इन्द्रियाँ स्वस्थ हो, मेरी इन्द्रियाँ पवित्र हो, प्रभु!** जिससे मैं आपके द्वार पर आ जाऊं, आपकी प्रतिभा को विचारने लगूं तो सबसे प्रथम मानव ब्रह्मयाग में परिणत हो जाता है ।

संध्या में सबसे पूर्व **शन्नो देवी** आता है! **हे शन्नो!** तू देवी है, तू हमारे कंठ में विराजमान हो । वह शन्नो हमारे **कण्ठ** में विराजमान हो जाती है ।

प्रथम ही वाक् वाक् कहता है और वाक् वाक् कह करके यही उच्चारण कर रहा है कि मेरी वाक् शक्ति पवित्र हो।

वाक् शक्ति मेरी पवित्र हो। वाक् शक्ति में जाता है। **वाकः वाकः** कहता है क्योंकि यह जो वाक् शक्ति है यह वाणी से शब्द उच्चारण कर रहा है उस शब्द की जो गति है वह कितनी विशाल है कितनी महान है। तो प्रभु से आत्म लोक में जाने से पूर्व यह विचारता है कि मेरी वाक् शक्ति इतनी विचित्र हो। मेरा वाक्य, मेरा शब्द इतना महान हो कि उस शब्द के द्वारा मैं नाना लोकों में गति करने वाला बनूँ।

परिणाम क्या? मुनिवरों! देखो, यह जो वाक्य है यह दो प्रकार का कहलाया जाता है। वास्तव में एक वाक्य जो बाह्य ऊपरी रूपों में परिणत रहता है। एक आन्तरिक जगत् से आता है जो अन्तर्हृदय रूपी गुफा से आता है वह आर्शीवाद बन करके रहता है और जो कण्ठ से रचना होती है वह रचना शब्द की एक लौकिक रचना है, एक पारलौकिक रचना है। जो लौकिक रचना है वह लोक में शब्द गति करता है। तो पारलौकिक रचना है, जो अन्तर्हृदय रूपी गुफा से तरंगें चलती है, कण्ठ में आ करके वह शब्द

बनता है। शब्द के साथ में आकार बनता है और आकार बन करके पृथ्वी की परिक्रमा कर देता है, वह उत्तरायण से दक्षिणायन को गति करता है। दक्षिणायन से ऊर्ध्वा में गति करने वाला वह शब्द कहलाता है वह हृदय रूपी गुफा से एक शब्द चलता है।

हे परमात्मा! हे देव! मेरी वाक् शक्ति में इतना नृत्य होना चाहिये, इतना **अहिंसा परमो धर्मः** होना चाहिये कि मेरे वाक्य की शक्ति से जितने भी हिंसक प्राणी हैं जितने भी प्राणी मात्र हैं, मेरी वाणी मात्र से वे तृप्त होने वाले बनें।

द्वितीय वाक्य इसके पश्चात कहता है। मेरा जहाँ वाक्य पवित्र हो वहाँ मेरी **घ्राण** पवित्र होनी चाहिये। **प्राण** पवित्र हों। मेरे प्यारे! इस मानव शरीर में प्राण गति करते हैं। वाक्यम् वाक् के पश्चात ये **घ्राण** के क्षेत्र में जाता है। घ्राण की शक्ति में प्राणः प्राणः करके वह घ्राण को ऊँचा बनाता है। वह कहता है, हे प्रभु! मैं तेरे राष्ट्र में आया हूं। मैं तेरे इस महान जगत को जानना चाहता हूँ।

जहाँ वह वाक् शक्ति में जाता है, वहाँ वह प्राण के क्षेत्र में जाता है। तो कहता है कि **प्राणः प्राणः**। मेरे प्यारे! घ्राण जो इन्द्रियाँ हैं, ये मन्द सुगन्ध को ग्रहण करने वाली हैं। परमाणु आते हैं, गति करते हैं, परमाणु एक नहीं, अरबों खरबों परमाणु आते हैं। गति करते हैं, ब्राह्म जगत में जाते हैं और बाह्य से आन्तरिक जगत में प्रवेश करते हैं। आन्तरिक से बाह्य जगत में चले जाते हैं। यह परमाणुओं का क्षेत्र है। नाभि केन्द्र से ले करके ब्रह्मरन्ध के आसन से गति करता हुआ घ्राण के द्वारा यह प्राण गति करता है। ये प्राणेन्द्रियां, ये प्राण की अशुद्ध शक्ति है। इसमें प्राण गति करता है अथवा नृत्य करता रहता है। मानव की जो घ्राणेन्द्रियाँ हैं, इन्हीं के द्वारा यह मन्द सुगन्ध को जानता है।

इसके पश्चात आता है चक्षुः चक्षुः । प्रत्येक इन्द्रिय के लिए प्रभु से याचना करते हैं कि हे प्रभु! तू हमारे चक्षुओं को पवित्र बना और कैसा बना

कि हमारे द्वारा पाप दृष्टि न हो । यदि हमारे चक्षुओं में पापाचार की दृष्टि आ गई । तो वास्तव में हम पापी बन जाएंगे और एक समय वह आएगा कि वह पाप दृष्टि हमारा मूल बन करके हमारा विनाश कर देगी ।

उसके पश्चात हमारे यहाँ श्रोत्रम् श्रोत्रम् आता है। श्रोत्र कहते हैं जो श्रवण कर रहा है। यह श्रवण शक्ति क्या है? मानव को श्रवण करना चाहिए। शब्दों को श्रवण करना चाहिए। ध्वनि को श्रवण करना चाहिए। इसी ध्वनि के द्वारा मानव के द्वारा जो नाना प्रकार के यन्त्र, मानव के शरीर में जो नाना प्रकार के यन्त्र आदि लगे हुये है, उनमें जो ध्वनियाँ आ रही हैं, उन ध्वनियों को वह स्वीकार करता है।

वे जो श्रवण शक्ति है, वे दर्शनों की भाषा में, मीमांसाकार यह कहते हैं कि दर्शनो में ही उन श्रोत्रों को लगा रहना चाहिए।

तो हे विधाता! हमारे जो **श्रोत्र** हैं यह आपकी वार्त्ता को स्वीकार करते रहें, दूसरों की निन्दा को स्वीकार न करें, ये आज गुणों को धारण करने वाले बनें, दूसरों की वार्त्ताओं को श्रवण करें ।

विचार यह देने के लिये आया हूँ। कि मानव को नाभि केन्द्र में प्रवेश करना चाहिये। यह जो **नाभि केन्द्र** है इसमें साधक जब विद्यमान होते हैं, साधक जब साधना करने लगते हैं, जो योगाभ्यासी पुरूष होते हैं वे मूलाधार से नाभि केन्द्र में जाते है नाभि केन्द्र से **हृदय केन्द्र** में प्रवेश करते है। हृदय केन्द्र से वे **कण्ठ** में गति करते है। हमारी नाभि में अरे लगे गुए हैं वैद्यराज कहते हैं नाभि को जानो।

नाभि केन्द्र से ले करके ब्रह्मरन्ध के आसन से गति करता है।

इसी प्रकार हमारे जो हस्त हैं यह आपके अर्पण हैं, हे विधाता! इन्हें पवित्र करो । भुजा हमारे पवित्र हों **यशोबलम्** पवित्र हो । यह कैसे पवित्र बनेंगे? जब प्रभु का गुणगान गाएंगे और इन सबको प्रभु के अर्पण कर देंगे । हम श्रद्धालु बन करके, उस प्रभु का अनुकरण करते हैं तो विधाता से कहा

करते हैं कि **हे विधाता! यशोबलम्** हम किसी प्रकार भी किसी निरपराधी को दण्ड न दें यदि निरपराधी को दण्ड देंगे, तो विधाता! हमारा विनाश हो जाएगा । द्वितीय आकर हमारे पर आक्रमण करेगा । आज हम यह चाहते हैं कि हमारे भुजा पवित्र कार्य करें आज हम निरपराधी की रक्षा करेंगे तो वास्तव में कल्याण होगा । हे देव! कल्याण के करने हारे! तू आ, और हे भगवन! हम तेरे अर्पण हैं ।

उस आनन्द में जाने के पश्चात मानव को कितना व्यापक बनना है? मैं बहुत पुरातन काल से एक विवेचना कर रहा हूं। वह आत्म लोक की विवेचना है। आत्मलोक हम किसे कहते हैं? जहाँ हम ब्रह्मरन्ध्र की पुनः स्थिति का वर्णन करते हैं। जहाँ अन्त और पुनः सृष्टि का वर्णन करके बाहुभ्यामं में चले जाते हैं।

बाहुभ्यामं किसे कहते हैं? ये जो दिशायें हैं ये **बाहुभ्यामं** कहलाती है मानव दिशाओं को जानने लगता है। एक ऐसा विचित्र यह मानव शरीर बना हुआ है जब शरीर से ये आत्मा पृथक होता है, उस समय इसे आनन्द की प्रतीति होने लगती है। क्योंकि यह कर्म बंधनों का, यह कर्मों का एक बंधन है जो शरीर है।

प्रत्येक कर्म को व्यापक वाद में ले जाना है। प्रत्येक इन्द्रिय से जो कर्म होता है। उस प्रत्येक इन्द्रिय के कर्म को व्यापक बनाना है। प्रत्येक इन्द्रिय में प्रभु का और अपना मिलान करना है। उनमें मानव-तत्व को मानव दर्शन को पान करना है। जब आत्मा यह जान लेता है कि तू स्थूल शरीर नहीं है, तू चक्षु नहीं है, तू वाक् नहीं है तू घ्राण भी नहीं है और क्या है? तू घ्राण भी नहीं, चक्षु भी नहीं, श्रोत्र भी नहीं, वह कण्ठ और हृदय भी नहीं। तू क्या है? तू एक रस रहने वाली चेतना है।

इसी प्रकार आगे चलकर मार्जन किया करते हैं प्राणायाम क्रिया करके प्राणायाम में कहते हैं **भूः**, **भुवः**, **स्वः**, **महः**, **जनः**, **तपः**, **सत्यम्** । हे विधाता!

हम प्राणायाम करें, समाधि में लय हो जाएं, जिससे हम इन **भूः**, **भुवः**, **स्वः**, **महः**, **जन**, **तपः** लोक लोकान्तरों में पहुंच सकते हैं । विधाता हमारे द्वारा और कोई साधन नहीं, जिससे हम इन लोक लोकान्तरों को जान सकेंगे, हम आपकी महिमा को देख सकें, इसीलिए सबसे पूर्व अपने को बनाना ।

उसके पश्चात् आता है **ऋतञ् च सत्यञ् च** हे विधाता! तू वास्तव में ऋत है । तू वास्तव में सत्य है, पवित्र है । हे विधाता! अब हम तेरे आँगन में आने योग्य हो गए हैं अब हम पवित्र बन गये हैं हमने सब ही कुछ आपके अर्पण कर दिया है । उस समय प्रभु का गुणगान गाते हैं ।

हमारे यहाँ यौगिक साहित्य में, जब योग के ऊपर अनुसन्धान करने लगता है । योग की आठ प्रवृत्तियां मानव की जागरूक हो जाती हैं । आठों भुजाओं से वे कल्याण करने वाली, अष्ट भुजा, अष्ट दिशाएं कहलाती हैं ।

इसके पश्चात् आगे चलकर यह पद अशुद्ध मार्ग पर न चलें यह उस मार्ग में चलें जहाँ ऋषि, महर्षियों का सत्संग हो रहा हो । यह उस मार्ग को चलें जहाँ प्रभु! आपका गुणगान गाया जा रहा हो । जहाँ दुराचारियों का गुणगान गाया जा रहा हो, उस मार्ग को न चलें, वह मार्ग मानव के कल्याण के लिए नहीं सन्ध्या की व्याहृतियां क्या कह रही हैं कि हमारे अंग पवित्र हों हृदय उदार हो, पवित्र हो ।

सबसे प्रथम **प्राची दिक्**, **दक्षिणी दिक्**, **प्रतीची दिक्**, **उदीची दिक् ध्रुवा**, **दिक ऊर्ध्वा दिक्** ईशान कोणों और दक्षिणाय कृति कहलाती है ये अष्ट भुजाएं कहलाती हैं । यह जो प्रकृति का सर्वत्र ब्रह्माण्ड, प्रकृति की जो रचना हो रही है वह सबसे प्रथम पूर्व दिशा से प्रकाश आता है । वह प्रातःकाल में अदिति, सूर्य उदय होता है इसीलिए उस मां का सबसे प्रथम भुज **प्राची दिक्,** हमारे यहाँ पूर्व दिशा में आता है जिसमें अदिति उत्पन्न होते हैं ।

वह प्रकाश का भण्डार है । प्रातः काल होते ही प्रत्येक मानव पूर्व मुख हो करके वह याग करता है । क्योंकि पूर्वाभिमुख होकर के याग इसीलिए,

क्योंकि वह प्रकाश का भण्डार हैं वह मां इस प्रकृति का एक भुज कहलाता है । उसके एक भुज में प्रकाश है ।

वह प्रकाश कैसा है? पूर्व दिशा से ही सूर्य उदय होता है । वह ऊषा और कान्ति के सहित आता है । प्रातःकालीन जब सूर्य उदय होती है, तो ऊषा और कान्ति प्रसाद रूप में मानव को प्राप्त होती है । हे मानव! तू उस प्रसाद को प्राप्त करने वाला बन । जब ऊषाकाल होता है उस ऊषाकाल में, अन्तरिक्ष में लालिमा होती है, वह लालिमा मानव के नेत्र का प्रकाश बन करके मानव को अमृत बिखेरती रहती है । प्रत्येक मानव अमृत को पान करता रहता है ।

हमारे ऋषि मुनियों ने कहा कि जो साधना करने वाले पुरुष हैं, जो गृह में रहने वाले पुरुष हैं, वे सदैव जागरूक हो जाएं और वे पूर्वाभिमुख हो करके, अपना ध्यान अथवा साधना करने में सदैव रत्त रहें । क्योंकि वह प्रकाश का भण्डार है । क्योंकि प्रकाश ही तो मानव का जीवन है । प्रकाश के आने पर कांति बन करके आती है, अन्धकार समाप्त हो जाता है । क्योंकि अन्धकार अज्ञान का प्रतीक है और प्रकाश ज्ञान का प्रतीक माना गया है ।

सबसे प्रथम ये पूर्व कहलाता है । यह देवी कि एक भुजा कहलाती है, मां काली की एक भुजा कहलाती है ।

द्वितीय भुज **दक्षिण दिक्** कहलाता है । **दक्षिण दिक्** किसे कहते हैं? वे पूर्व से दक्षिण को ही विद्युत की तरंगें चलती हैं । दक्षिणदिक् उसमें शब्द विद्यमान होता है । एक मानव शब्द का उच्चारण करता है । उच्चारण करके जो शब्दों का भण्डार है, वह उसका दक्षिण दिक् कहलाता है । क्योंकि वह द्वितीय चरण अथवा द्वितीय भुज कहलाता है ।

दक्षिण में विद्युत का भण्डार रहता है । हमारे आचार्यों ने एक वाक्य कहा है कि मानव को दक्षिण दिशा की ओर पगों को करके कदापि विश्राम में तल्लीन नहीं रहना चाहिए । क्योंकि इससे दक्षिण दिशा को प्राप्त विद्युत

और मानव की विद्युत दोनों का समन्वय हो जाता है । इसीलिए हमारे आचार्यों ने कहा कि दक्षिण दिशा की ओर पगों को करके विश्राम नहीं करना चाहिए । ऐसा करके विश्राम में तल्लीन नहीं रहना चाहिए । ऐसा हमारे वैदिक साहित्याचार्यों ने एक शिक्षा प्रद वार्त्ता प्रगट की है ।

यदि और भी भी ऊर्ध्वा में जाओगे तो दक्षिण में शब्दों का भंडार है । जो भी शब्द जाता है, वह दक्षिण में जाता है क्योंकि श्रोत्रों का जो देवता है, वह दक्षिण दिशा कहलाती है । इसीलिए जो भी शब्द आता है, उस शब्द को जान करके, जो भी उच्चारण करता है, वह एक गति करता है, और उत्तर से पूर्व हो करके वह दक्षिण को प्राप्त हो करके मानव के श्रोत्रों में प्रवेश करता है । तो इसीलिए यह जो दक्षिण दिशा है, यह अग्नि, यह विद्युत का भण्डार है । यहां नाना प्रकार की विद्युत आती है । और विद्युत आ करके वन इत्यादियों की वृद्धि कर देती है ।

हमारे यहाँ आचार्य **प्रतीची दिक्** कहते हैं, पश्चिम दिशा को । यह जो पश्चिम दिशा है यह मां की तृतीय भुज कहलाता है । साधना करने वाला कहता है, हे प्रतीची दिक्! हे अन्न के भण्डार! तू मानव की वृद्धि करने वाला कहलाता है, क्योंकि पश्चिम दिशा में अन्न का भण्डार होता है । प्रभु का दिया हुआ अन्न का भण्डार होता है । जब पश्चिम दिशा से वायु वेग से गति करती है, विद्युत को साथ में ले करके, तो मां पृथ्वी के गर्भ में नाना प्रकार की आभा को परिणत कर देती है । और नाना प्रकार का खाद्य और खनिज पदार्थ इसी से उत्पन्न होने लगता है ।

तो यह अन्न का भण्डार है, अन्नादि कहलाता है । तो वह प्रतीची दिक् कहलाता है । प्रतीची दिक् वह मां का तृतीय भुज कहलाता है । प्रकृति मां काली का भुज कहलाती है । इससे वह अन्नादि प्रगट करती है, अन्नादि को प्रसाद रूप में देती है । नाना प्रकार के खनिज को वो प्रसाद रूप में परिणत करती है । तो वह, प्रतीची दिक् कहलाता है । प्रतीची दिक् की आभा में

रमण करने वाला है । वह एक आभा में गति करने वाली एक विचित्रता है । जो वह तृतीय भुज कहलाती है ।

चतुर्थ जो भुज है वह **उदीची दिक्** कहलाती है । उदीची का अभिप्राय क्या है? उदीची कहते हैं उत्तरायण को । तो जितने साधकजन हैं वे उत्तरायण को पूर्वाभिमुख करके साधना करते हैं, योगाभ्यास करते हैं, प्राण की गति को लेते हैं । क्योंकि जितना भी ज्ञान का भण्डार है, वह उत्तरायण में रहता है । हमारे यहाँ उत्तरायण और दक्षिणायन दो प्रकार की दिशा कहलाती है ।

दो प्रकार का ज्ञान होता है एक उत्तरायण होता है, एक दक्षिणायन होता है । एक माह में दो पक्ष होते हैं एक उत्तरायण होता है, एक दक्षिणायन होता है । एक शुक्ल होता है, तो एक कृष्ण होता है । कृष्ण अंधकार को कहते हैं और शुक्ल प्रकाश को कहते हैं । तो उत्तरायण, यह माता का चतुर्थ भुज कहलाता है ।

ध्रुवा दिग्विष्णुरधिपतिः ध्रुवा में रमण करना । ध्रुवा कहते हैं, नीचे आभा कृतियों में, जहाँ मानव आसन पर विद्यमान होता है । साधक कहता है, हे प्रभु! हे ध्रुवा दिग् विष्णु! हे विष्णु! मेरे निचले स्थान में, भी तू ही विद्यमान है । तू कैसा पवित्र देवता है? वह कहता है ध्रुवा दिग् विष्णुः अधिपतिः दिग् विष्णु कह रहा है । वह दिग् विष्णुः की याचना कर रहा है । मैं जब चारों भुजाओं को जान लेता हूँ तो उस समय इस प्रकृति में दिग्विष्णु, दिग्विजय बन जाता हूँ । विष्णु के स्वरूप को जानने में कुछ कुछ सफलता को प्राप्त करने लगता हैं । यह साधक याचना करता है ।

साधक यह विवेचना कर रहा है । तो वह कौन सा साधक है? जो दिग् विष्णु है? जो ध्रुवा में गति करने वाला है । जो प्रकृति की भी यह ध्रुवा गति में वह ज्ञानी गति करता है । वैज्ञानिक इसमें रमण करने लगता है । साधक ध्रुवा में प्रभु को दृष्टिपात करता है और उसे ध्रुवा में भी ऊर्ध्वा में भी, प्राची

में भी, दक्षिणी में भी, प्रतीची में भी, उदीची में भी । मां ही मां दृष्टिपात होने लगती है ।

हे ममतामयी मां! तू कैसी भोली है? तू कैसी महान् है? तू अन्धकार को समाप्त करके, तू प्रकाश में लाने वाली है । तू प्रत्येक मानव को प्रकाश में ला रही है और वह प्रकाश ही मानव को प्रतिष्ठित बनाता है । तेरा ममतामयी जो महत्व है वह मानव के हृदय में ओत प्रोत हो जाता है ।

तो दिग् विष्णुरधिः पतिः वह दिग्विष्णुः है । विष्णु की हम याचना करते हैं । तो दिग्विष्णु माता के एक भुज में रहता है । वह ध्रुवा में भी रहने वाली है । तो इसीलिए यह मां का पांचवां भुज कहलाता है और छठा जो भुज है वह उर्ध्वा में रहता है ।

ऊर्ध्वा दिग्बृहस्पतिः हे बृहस्पति लोकों में रमण करने वाले प्राणियो! मां बृहस्पति लोकों में गति करने वाली है । वह कैसी ऊर्ध्वा में रहने वाली मां है? ऊर्ध्वा में भी साधक मां को दृष्टिपात कर रहा है । मां की ऊर्ध्वा में आभा को साधक दृष्टिपात कर रहा है ।

ऊर्ध्वा दिग्बृहस्पतिः वह बृहस्पति हैं नाना लोक लोकान्तरों में वैज्ञानिकों के लिए बृहस्पति मण्डल है, दार्शनिकों के लिए बृहस्पति अन्तरिक्ष है और जो देव प्रवृत्ति वाले हैं, बृहस्पति उनके लिए गुरु बन करके, उनके ऊपर साया (छाया) करके प्रकाश दे रहा है, ज्ञान की आभा प्रकट कर रहा है ।

वे बृहस्पति हैं । वह ऊर्ध्वा में श्वित्रो शिव बन करके मानव का कल्याण करने वाला है । नाना प्रकार के सुखों की, आनन्द की वृष्टि कर रहा है । कैसी वृष्टि कर रहा है? शिव महा आनन्द की वृष्टि करके मानव को प्रकाश दे रहा है । देवत्व को प्राप्त कर रहा है । दैवी सम्पदा वाले, देववत् को प्राप्त होते जा रहे हैं ।

यह इस मां का छठा भुज कहलाता है । जिसमें ऊर्ध्वा में बृहस्पति गति कर रहा है । ऊर्ध्वा में जब तुम जाओगे, तो नाना प्रकार के मण्डलों में

चले जाओगे । तो द्यौ लोकों में रमण करने लगोगे । आगे चले जाओगे, तो तुम्हें ऐसे ऐसे लोक प्राप्त होंगे, चार अरब बत्तीस करोड़ का यह जो कल्प चला जाता है, सृष्टि का दिवस चला जाता है, इतने समय में भी इन मण्डलों का प्रकाश पृथ्वी मण्डल पृथ्वी तल पर नहीं आ पाता ।

वह कैसा है? वह कैसी आभावाला है? इतने समय में तीन तीन कल्प समाप्त हो जाते हैं । ब्रह्मरात्रि, ब्रह्म दिवस समाप्त हो जाते हैं परन्तु बहुत से तारा मण्डलों का प्रकाश इस पृथ्वी को स्पर्श भी नहीं कर पाता ।

ऊर्ध्वा दिग्बृहस्पति ऊर्ध्वा में गति करने वाला उपस्थान को प्राप्त होता है । ऊर्ध्वा में कौन जा रहा है? साधक जा रहा है । ऊर्ध्वा में कौन जा रहा है? जो ब्रह्मवेत्ता बनने जा रहा है, जो ब्रह्म का चिन्तन करने वाला है । साधक योगीजन अपनी उड़ान उड़ रहा है । ऊर्ध्वा में कौन जाता है? साधक जाता है प्रकृति की गोद में वैज्ञानिक चला जाता है, विज्ञान के युग में गति करने लगता है । वैज्ञानिक यंत्रों पर विद्यमान हो करके लोक लोकान्तरों की यात्रा करने लगता है ।

ऊर्ध्वा दिग्बृहस्पतिः ऊर्ध्वा में मानव को जाना चाहिए, ऊर्ध्वा में रमण करना चाहिए । यह जो यज्ञशाला में ईशान कोण कहलाता है, इसमें जहाँ कलश की स्थापना होती है; यज्ञशाला का जब आकार बनता है । त्रिभुजों वाला वहाँ ईशान कोण में कलश और ज्योति का प्रकाश होता है ।

ईशान में गति करने वाला जब योगाभ्यास करने वाला प्राणी, मूलाधार में मूलबन्ध को लगा देता है । मूलबन्ध को लगा करके उसके पश्चात् वह नाभि केन्द्र में वह ज्योति का प्रकाश दृष्टिपात करता है । उसके पश्चात् वह जालन्धर बन्ध को लगा करके हृदय चक्र में अपने में ज्योति को दृष्टिपात करता है । उसके पश्चात् वह कण्ठ में और स्वाधिष्ठान चक्रों में और जहाँ त्रिवेणी का स्थान, जहाँ इडा, पिंगला, सुषुम्णा इनका मिलान होता है वहाँ त्रिभुज कहलाता है तीनों गुणों, तमोगुण, रजोगुण और सतोगुण, को दृष्टि

पात करके आत्मा **ब्रह्मरन्ध्र** में प्रवेश करता है ।

ब्रह्मरन्ध्र में जब योगेश्वर जाता है, तो वह सर्व ब्रह्माण्ड को दृष्टिपात करता है । तो यज्ञशाला में ईशान कोण में कलश होता है । और ईशान कोण में ही ज्योति विद्यमान होती है । ज्योति को योगी ध्यानावस्थित करता है । कलश उसे कहते हैं, जो कुंभाकार बनाता है । जहाँ इसमें जल ओत प्रोत होता है । इसमें अमृत होता है । वह अमृत प्राण की वृष्टि कर रहा है, ज्ञान की वृष्टि कर रहा है । कलश स्वस्तिः के देने वाला है ।

उसको पान करने से सरस्वती आती है । अमृत के ही पान करने वाले सरस्वती को अपने में धारण करते हैं । वह ईशान मां काली का सातवां भुज कहलाता है ।

आठवां जो भुज है वो दक्षिणाय कृति कहलाता है । इसमें विद्युत समाहित हो करके और पश्चिम दिशा से अन्न का भंडार लेकर के इस मानव को भरण कर देती है ।

संसार में प्रत्येक स्थान में माँ दुर्गा का पूजन होता है । माँ दुर्गा क्या है? माँ दुर्गा भी वह सन्ध्या है । हे माँ दुर्गा! तू वास्तव में हमारा कल्याण करने वाली है । हे माता दुर्गे! तुझे अष्ट भुजाओं वाली कहा जाता है । तू वास्तव में अष्ट भुजाओं वाली है । जब तू आठ भुजाओं को लेकर संसार में आती है तो यह संसार प्रकाशमान हो जाता है । सिंह तेरा वाहन है । तू सिंह रूपी वाहन पर सवार होकर आ, और आ करके दैत्यों को शांत कर और देवताओं की रक्षा कर । माता दुर्गे! तू वास्तव में कल्याण करने वाली है । तू वास्तव में हमारे जीवन को, हमारे हृदय को उदार बनाने वाली है । मल, विक्षेप आवरण को शांत करने वाली है और निर्मल और स्वच्छ बना देती है । अष्ट भुजाओं वाली दुर्गा कौन है? जिसकी अष्ट भुजाएं हैं । दुर्गा नाम है विद्या का । विद्या किसी के आधार पर आती है । विद्या का जो वाहन है वह भी विचित्र है । वह सिंहनाद है, जिसके आधार से विद्या आती

है । यह अष्ट भुजाओं वाली विद्या अष्ट भुजाओं वाली दुर्गा कौन है? जब मनुष्य ज्ञान के मार्ग में जाता है तो विद्या को पान करने वाला बन जाता है । उस समय यह दुर्गा, यह विद्या इस ब्रह्माण्ड का जिसमें आठ दिशाएं हैं उनका ज्ञान करा देती है । उसके ज्ञान और विज्ञान को मानव जान जाता है कि पूर्व में क्या है? पश्चिम में क्या है? उत्तर में क्या है? दक्षिण में क्या है? उन दोनों के माध्यम में क्या है? आठों दिशाओं को जानने वाला जिज्ञासु दुर्गा का अनुकरण करता है । दुर्गा माता की पूजा कैसे की जाती है? दुर्गा माता की पूजा मनुष्य उस काल में कर सकता है जब उसके द्वारा ज्ञान होता है, विद्या होती है, सिंहनाद होता है । सिंहनाद कौन सा है? जिससे अपराधियों को कुचला जाता है । अज्ञान रूपी पशुओं को शांत किया जाता है । हृदय निर्मल और स्वच्छ बन जाता है । तो माँ दुर्गे भी सन्ध्या है ।

हे संध्या! तू हमारा कल्याण करने वाली है । माता! जब यह संसार तेरे आँगन में आ जाता है । राजा यदि तेरा अनुकरण करता है तो राजा महान बन जाता है । मेरी माताएं तुझे कंठ में धारण कर लेती हैं तो उनके गर्भ में वह बालक उत्पन्न होते हैं जो देवता बन जाते हैं । आज तेरा अनुकरण करने वाले देवता बन जाते हैं आज तू सबको देवता बनाने वाली है । जिस समय मेरी प्यारी माताओं का अन्तःकरण पुकार कर कहता था, मानव का अन्तःकरण पुकार कर कहता था कि हम संसार में अपने भोगों को भोगने के लिए आएं हैं, हमें ऐसा कार्य नहीं करना है कि भोग ही हमें भोग लें ।

तो प्रभु का गुण गान गाने के पश्चात् प्रभु को रक्षक बनाते हैं । प्रभु हमें हिंसक प्राणियों से बचाओ । उनसे हमारी रक्षा करो । एक समय वह आता है, जब परमात्मा रक्षक बन जाता है और हमारा कल्याण करने लगता है ।

प्रभु मानव का कल्याण किस काल में करता है? जब हम प्रभु के आँगन में जाने योग्य हो जाते हैं माता अपने प्यारे पुत्रों को, लोरियों का पान

किस काल में कराती है? जब प्यारे पुत्र व्याकुल हो जाते हैं और माता की याचना करते हैं तब वह माता अपने पुत्रों के भाव को जान लेती है कि मेरा पुत्र क्षुधा से व्याकुल है । जिसे अपनी लोरियों में लगाकर आनन्दित करा देती है । इसी प्रकार वह परमात्मा हमारी रक्षा किस काल में करता है जब हम व्याकुल हो जाते हैं और व्याकुल हो करके वैराग्य हो जाता है । केवल उस परमात्मा का ध्यान रहता है । उस काल में परमात्मा हमारा रक्षक बन करके हमारा कल्याण करता है ।

तो हे विद्या! तू हमारा कल्याण करने वाली है । माता! जब यह संसार तेरे आँगन में आ जाता है । राजा यदि तेरा अनुकरण करता है तो राजा महान बन जाता है । मेरी माताएं तुझे कंठ में धारण कर लेती हैं तो उनके गर्भ में वह बालक उत्पन्न होते हैं जो देवता बन जाते हैं आज तेरा अनुकरण करने वाले देवता बन जाते हैं आज तू सबको देवता बनाने वाली है ।

मुझे स्मरण आता रहता है, एक समय बेटा! ऋषि मुनियों का समूह एकत्रित हुआ, और ऋषि मुनियों के समूह में यह वाक् उत्पन्न हुआ, ब्रह्मचारी सुकेता ने यह कहा था, ब्रह्मचारी रोहिणीकेतु ने यह कहा, कि हम याग को करने जा रहे हैं इन पञ्च महायागों की मीमांसा क्या है? तो महर्षि पिप्लाद ने महर्षि पिप्लाद ने महर्षि सुकेता औा तत्त्व ऋषि महाराज ने कवन्धि वृत्तकेतु ने मेरे प्यारे! शाण्डिल्य ने नाना प्रकार के वाक् प्रगट करते हुए यह कहा था कि पञ्च महायागों मे सबसे प्रथम ब्रह्मयाग माना है। बेटा! ब्रह्मयाग किसे कहते हैं? बेटा! जहां ब्रह्म की मीमांसा की जाती है। बेटा! ब्रह्म के ऊपर चिंतन किया जाता है। यह ब्रह्म क्या है? मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्मयाग का प्रथम प्रकरण आता है। ब्रह्मयाग उसे कहा जाता है जहाँ मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्म का विचार होता है, एक मानव संध्या काल में विराजमान होता है, सबसे प्रथम वह अपनी इन्द्रियों को स्पर्श करता हुआ, वह अपनी इन्द्रियों के विषयों को, मेरे प्यारे! जानता हुआ और परमात्मा से अपना तन्मय चाहता है, परमात्मा से तन्मय चाहता है। और यह कहता है हे प्रभु! मेरी इन्द्रियाँ स्वस्थ हो, मेरी इन्द्रियाँ पवित्र हो। प्रभु! जिससे मैं आपके द्वार पर आ जाऊं आपकी प्रतिभा को विचारने लगूं। तो मेरे प्यारे! देखो, सबसे प्रथम मानव ब्रह्मयाग में परिणत हो जा, ब्रह्म याग किसे कहा जाता है? मेरे प्यारे! ब्रह्म का चिन्तन करना, ब्रह्म की प्रतिभा को दृष्टिपात करना, मैंने बहुत पुरातन काल में बेटा! तुम्हें निर्णय कराया था बहुत पुरातन काल की वार्त्ता है, बेटा! जब मेरे पूज्यपाद गुरूदेव कजली वनों में विराजमान होते थे, तो मानो जब वह ब्रह्मयाग करते थे, प्रातः काल में तो ब्रह्म की प्रतिभा के ऊपर चिन्तन करना प्रारम्भ करते थे, नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों को निहारने लगते थें, और यह विचारने लगते थे, कि प्रभु! तू कितना विचित्र है, तेरी कैसी विचित्रता है, प्रभु! यह कैसा अनुपम

जगत है, कैसे लोक लोकान्तर हैं? प्रभु! तेरे राष्ट्र में एक दूसरा मण्डल, मण्डल से मिलान नहीं करता। कैसा चक्र चल रहा है? ऋत और सत में बेटा! सर्वत्र जगत गति कर रहा है, अपने अपने आँगन में गति कर रहा है, नाना लोक लोकानतर अपनी अपनी परिधि पर परिणत हो रहे हैं, क्रियाशील दृष्टिपात आते हैं, एक दूसरा मण्डल, एक दूसरें में समाहित होता दृष्टिपात आता है।

हमने बहुत पुरातन काल में निर्णय देते हुए, अथवा संक्षिप्त परिचय देने के लिए हमारा आशय रहता है कि हम उस परमपिता परमात्मा की प्रतिभा अथवा उसकी महिमा का संक्षिप्त परिचय दे सकें। आज का हमारा वेद का ऋषि क्या कह रहा था? हमारे प्रारम्भ के वेद मन्त्रों में उस आनन्दमयी की महिमा का वर्णन आ रहा था, जिसको हमारे यहाँ वसुन्धरा कहा जाता है, वसुन्धरा का अभिप्राय यह है कि जिसके गर्भ स्थल में हम वशीभूत रहते हैं, उस माता का नाम वसुन्धरा कहलाया जाता है। प्रातःकाल में मानव अपने आसन को त्यागने से ही पूर्व उस प्रभु का चिन्तन करता है प्रातःकाल की अमृत वेला में विराजमान होकर के अपने प्रभु का गुणगान गाता हुआ, अपने देव की महिमा का गुणगान गाता हुआ मानव अपने मस्तिष्क को स्वच्छ बना करके वह ब्रह्म के चिन्तन में संलग्न हो जाता है, वह ब्रह्मयाज्ञी बन जाता है और ब्रह्म का चिन्तन करता हुआ ब्रह्म की उड़ान उड़ने के लिए तत्पर हो जाता है। आसन पर विराजमान रहता है और ब्रह्म याग करता है। ब्रह्मयाग का अभिप्राय अपने स्वरूप और बाह्य स्वरूप दोनों का समन्वय करना और ब्रह्म की महत्ता को दृष्टिपात करने का नाम ब्रह्मयाग माना है।

मेरे पुत्र! तुम्हें दृष्टिपात होगा, तुम्हें स्मरण भी होगा कि मानव जब ब्रह्मयाग में परिणत होता है, ब्रह्म याज्ञी बनने के लिए तत्पर होता है तो

वहाँ सबसे प्रथम अपने बाह्य जगत में जाता है, बाह्य जगत के नाना तथ्यों पर विचार विनिमय प्रारम्भ करता है। जैसे अग्नयाधान है, अग्नि होत्र है, अग्नि की धाराओं को विचा विनिमय में प्रारम्भ करता है। अग्नि में कितने प्रकार की धाराएँ हैं? जैसे आध्यात्मिक वेत्ताओं ने हमारे यहाँ अग्नि की धाराएँ कुछ और स्वीकार की हैं। विज्ञान कुछ कह रहा है, आयुर्वेद कुछ कह रहा है, तो अग्नि की नाना धाराओं में उस महान् देव की प्रतिभा को दृष्टिपात करना और उसको अन्तर्रात्मा में ले जाने का नाम मानो ब्रह्म से अपना समन्वय करना है। अथवा उस ब्रह्म की आभा में रमण करना है। क्योंकि प्रत्येक प्राणी जब संसार में आता है तो बाह्य जगत को ही विचारता रहता है और आंतरिक जगत् को न विचारने से प्रत्येक मानव दुःखित रहता है। यदि वह अपने में ही दृष्टिपात करने लगे अपने में ही ब्रह्माण्ड की कल्पना करने लगे, ब्रह्म चिन्तन करने लगे तो यह संसार स्वर्गमय और आनंदमय बन सकता है।

कोई भी मानव इस संसार को आनन्दमय बनाना चाहता है, स्वर्गमय बनाना चाहता है तो अपनी स्थली पर विराजमान हो करके ब्रह्म याज्ञी बनें। ब्रह्मयाग करने वाला प्राणी इस संसार में उदासीन नहीं होता। वह सदैव चैतन्य रहता है, महान रहता है। इसीलिए प्रत्येक मानव, प्रत्येक मेरे प्यारे! ऋषि मण्डल को अपनी मानवता पर और परमात्मा की मानवता पर विचार विनिमय करने वाला बनना चाहिए। जैसा मैंने तुम्हें बहुत पुरातन काल में निर्णय देते हुए कहा था। आज भी वह प्रसंग आता रहता है। मेरे प्यारे महानन्द जी भीउच्चारण करते रहते हैं। वेद का मन्त्र भी इस प्रकार की प्रेरणा देता चला जाता है।

सबसे प्रथम, ब्रह्म का चिन्तन होता है। और ब्रह्म के चिन्तन का अभिप्रायः यह कि ब्रह्मा की आभा में रमण करते रहते हैं, यह ब्रह्म क्या

है? हमारे यहाँ प्रथम नियम माना है पवित्रवत् मे कि पति पत्नी अपने अपने स्थान पर विद्यमान हो करके प्रातःकाल अपने आसन् को त्याग करके ब्रह्म का चिन्तन करते हैं।

हे ब्राह्मणो! मेरे राष्ट्र में कोई ऐसा गृह नहीं है, जिस गृह में ब्रह्म का चिन्तन न होता हो, पति पत्नी ब्रह्म का चिन्तन न करते हों, एक आसन पर विद्यमान हो करके। ब्रह्म क्या है? ब्रह्म किसे कहते है? मानो देखो, यह ब्रह्म क्या हे, जिस ब्रह्म में यह संसार पिरोया हुआ है? जिस ब्रह्म में जो हम इस मानवीय आभा को पिरोने वाले हैं? तो मानो, बेटा! वह ब्रह्म का चिन्तन, प्रत्येक राजा के प्रत्येक समाज में, गृह में होता रहता है जिससे गृह में सात्विकता आ जाएं, मानवता आ जाएं, और मानवता आ करके शिष्टाचार आ जाएं, सदाचार आ जाएं। क्योंकि ब्रह्म के चिन्तन से मानो नाना लाभ होते हैं। ब्रह्म का चिन्तन करने वाले पति पत्नियों के गृह में सन्तान मानो देखो, बुद्धिमान होती है।

परन्तु आज का हमारा वेदमन्त्र हमें नाना प्रकार की प्रेरणा दे रहा था। और उन प्रेरणाओं में से अभ्यम् गतिः वृणश्यमतम! देवम् अदितिः ऋषि। ब्रह्म ब्राह्मणाः कृतम् देवाः। वेद में नाना प्रकार के इस प्रकार के मन्त्र आते हैं। हमारे यहाँ नाना दार्शनिकों का जब समूह विद्यमान होता है तो नाना प्रकार का विचार विनिमय भी होता रहता है। क्योंकि इस संसार के सम्बन्ध में भिन्न भिन्न प्रकार की विचारधाराएं मानव के मस्तिष्कों में होती रहती हैं। मुझे वह काल स्मरण आता रहता है, जिस काल में बेटा! राजा जनक के यहाँ ब्रह्मयाग होता रहता था। यहाँ नाना प्रकार के यागों का वर्णन वैदिक साहित्य में आता रहता है। जैसे ब्रह्म याग है गो मेध याग है, अश्व मेध याग है, वाजपेयी याग है, अग्निष्टोम याग हैं, और भी नाना प्रकार के यागों का चयन अथवा वर्णन वैदिक साहित्य में आता रहता है। आज मैं यागों

का प्रकरण अथवा उसकी आभा का वर्णन करने नहीं आया हूँ।

एक समय उपदेश दे रहे थे कि मानव को इस ब्रह्मयाग में रमण करना चाहिए। यह ब्रह्म याग ही एक महान् याग कहलाता है। मानो हम काली मां, देवी के उस स्वरूप को जानने वाले बनें, जो अष्ट भुजाओं वाली है। आठों भुजाओं में कोई न कोई प्रतीक माना गया है। किसी में शंख माना है, किसी में चक्र माना है, किसी में स्वाति माना है, किसी में पदम् की प्रतिभा मानी है परन्तु देखो, किसी में गदा मानी है और त्रिशूल भी इसके भुजों में रहता है। मानो देखो, इस आभा में हमें रमण करना चाहिए और ब्रह्म के आभा में ब्रह्म चिन्तन में रमण करना चाहिए।

मेरे प्यारे! मुझे स्मरण है कि एक महर्षि वैशम्पायन हुए हैं। वैशम्पायन मुनि महाराज बेटा! वो मानो देखो, जो दढ़डीय भास्पति गोत्र में रहे हैं, वत्स गोत्र कहते हैं, वे वत्स वस्ता गोत्रों में उनका जन्म हुआ था। वे याग में बड़े पारायण थे। एक समय महाराज अश्वपति के यहाँ एक याग हुआ था, वह वृष्टि याग था। हमारे यहाँ भिन्न भिन्न प्रकार के यागों का चयन होता रहा है, परम्परागतों से ही,। जैसे हमारे यहाँ अग्निष्टोम याग है, वाजपेयी याग है, कृतिका याग है, रुद्र याग है, विष्णु याग है, और ब्रह्म याग है, देवी याग है, कन्या याग है, नाना प्रकार के यागों का चयन, जैसे अजामेघ और अश्वमेध यागों का चलन हमारे यहाँ, परम्परागतों से रहा है। मेरे प्यारे! मुझे स्मरण आता रहता है महर्षि वैशम्पायन ऋषि महाराज एक समय बेटा! महाराजा अश्वपति के याग में से अपने आश्रम में आ पहुँचे। वे प्रातः कालीन याग में से आये, जिस पर विचार विनिमय करते रहे, परन्तु सायंकाल को यह विचार आ गया कि वेदमन्त्र कह रहा था, यज्ञमानः यज्ञं भविताः यज्ञं प्रह्लाः देवस्यं लोकाः कि यज्ञमान का रथ बन करके यज्ञशाला का, रथ बनकर के द्यौ लोक को जाता है। ऐसा उन्हें कहीं वेदों में प्राप्त

हुआ। वेद का मन्त्र स्मरण करके निद्रा की गोद में चले गये। मध्य रात्रि काल जैसे ही समाप्त हुआ तो ऋषि जागरूक हो गये, और ऋषि इसके ऊपर अनुसन्धान करने लगे, विचारने लगे कि वेदमन्त्र कहता है कि यज्ञमान का रथ बन करके द्यौ लोक को जाता है। यह मैं कैसे सिद्ध करूँ। इसी विचार में लग गये, मानो इसका वैज्ञानिक तथ्य क्या है? इसके ऊपर आध्यात्मिक वाद क्या है? इसके ऊपर ऋषि चिन्तन करने लगे। जब ऋषि चिन्तन में लग गएं चिन्तन करते रहे। बेटा! सूर्योदय हो गया। मेरे प्यारे! उनके निकटतम आश्रम था महर्षि विभाण्डक मुनि का। महर्षि विभाण्डक ने विचारा कि आज तो ऋषिवर वैशम्पायन ने अपने आसन को नहीं त्यागा है। इसके मूल में कोई कारण है।

राजा जनक ने जब ऋषि मुनियों से यह प्रश्न किया तो ऋषि मुनियों ने कहा, सम्भवे वाचनम् ब्रह्मा वाचाः राजो वृत्ति कृताः ऋषियों ने कहा, भई, हे राजन्! तुम्हारा राष्ट्र उस काल में ऊंचा बनेगा, जब प्रत्येक तेरे गृह में प्रत्येक राष्ट्र के गृह, प्रत्येक मानव के गृह में कोई याग की परम्परा बनेगी। क्योंकि बिना याग की परम्परा के, यह राष्ट्र, समाज इसका नहीं बनता। क्योंकि राजा के राष्ट्र में सुगन्धि चाहती है। प्रत्येक मानव सुगन्धि चाहता है, वह आनी चाहिए। जैसे राजा के राष्ट्र में ब्रह्म याग होता है, विचारों की सुगन्धि हमारे यहाँ सर्वश्रेष्ठ आनी है। जब माता अपने पुत्रों! को शिष्टाचार में, वाणी में शब्दावादी बना देती है तो मुनिवरों! माता प्रिय याग कर रही है। प्रत्येक पितरगण जब अपने पुत्र को एक महान् शिक्षा दे करके अभ्युदय बना देता है, वह अपने विचारों को सुगन्धि ले करके उसको सदाचार की प्रतिभा में परिणत कर देता है, तो प्रिय याग हो रहा है। परन्तु ऋषि मुनियों ने यह कहा कि प्रभु! यह याग तो हो रहा है, परन्तु एक याग ऐसा होता है जिससे देवता प्रसन्न होते हैं, देवताओं के प्रसन्न होने पर

समय समय पर वृष्टि होती है। समय पर प्रजा अपने में आनन्दयुक्त होती है।

तो मुनिवरों! महाराजा दिलीप जी भ्रमण करते हुए, महात्मा वशिष्ठ मुनि के द्वार पर पहुँचे। क्योंकि महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज ब्रह्मवेत्ता थे, वह ब्रह्मनिष्ठ होने से मेरे प्यारे! वह राजा ब्रहे जब राजा उनके समीप पहुँचे, तो माता अरुणधती और वशिष्ठ मुनि महाराज, प्रातःकालीन बेटा! ब्रह्मयाग कर रहे थे और जब ब्रह्मयाग कर रहे थे तो ब्रह्म याग में रत्त और उसके पश्चात् देवयज्ञ में। जब वह ब्रह्मयाग में रत्त थे तो महाराज दिलीप जी उनके चरणों की वन्दना में वह भी स्थिर हो गए। तो ब्रह्मयाग में, वह ब्रह्म की उपासना कर रहे थे, और उच्चारण कर रहे थे कि ब्रह्मन्! तू कितना महान् है, तू तपोमयी है, तेरा उग्र ही तप है, जो हमें यह संसार दृष्टिपात आ रहा है तेरा उग्र तप है जो मानो देखो, सूर्य की धारा बन करके, हमें तपा रहा है। तेरा उग्र तप है, जो अग्नि बन करके हमें प्रकाश दे रहा है। ऊष्णा बना रहा है। तेरा उग्र तप है मानो देखो, जो वायु हमें प्राण दे रही है। मेरे प्यारे! देखो, जो इस प्रकार की उपासना करते करते महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज, माता अरुणधती बेटा! उसमें शान्त हो करके, उसके पश्चात् वह देवयाग में लग जाते और देवयाग में जाकर के देवताओं का आह्वान करना। आह्वान का अभिप्राय क्या है? वह मानो अग्नि का अग्न्याधान करना, व उसका आह्वान करना और यह कहते हैं कि हे अग्नि! तू द्यौ बन करके, हे अग्नि! तू ही तो प्रकाश का द्यौतक बना हुआ है। हे अग्नि! तू ही मानो तेजस्वी बन करके कान्ति बन करके तू अमृत को बहाने वाली, चन्द्रमा की कांति बन जाती है।

हमारे यहाँ भिन्न भिन्न प्रकार की उपाधियों का वर्णन आता रहता है। बहुत पुरातन काल तक, बेटा! एक उपाधि चली आयी, जिस उपाधि का

नामोकरण जनक कहा जाता है। मानो वह जनक उपाधि, उसमें विदेह मानो करता हुआ अकर्त्ता की प्रवृत्ति को बनाना है, अथवा उस साधना को करना है, जो मानो देखो, राष्ट्र को भोगा जा रहा है, और राष्ट्र की प्रजा प्रसन्न है, परन्तु एक राजा अपने में उदासीन होना चाहता है, तो मानो उदासीन हो करके, वह अपने में अकर्त्ता को दृष्टिपात कराता है। परन्तु जब गम्भीर चिन्तन हुआ तो राजा जनक यह एक उपधि मानी जाती है, जो जनकोऽब्रहो सम्भवा जो ऋषि मुनियों को एकत्रित करके कहीं वह मानो देखो, ब्रह्म याग में गमन करने लगते हैं, कहीं मानो देखो, और भी भिन्न भिन्न प्रकार के यागों की प्रतिभा में रत्त हो गएं हैं। परन्तु देखो, वह तो राजा जनक की उपाधि है, राजा जनक की जो अनुपम उपाधि है, जिस उपाधि को पान करके मानो मानव जनक बनता है। और, वह जनक कैसे बनता है? जब तक ऋषि मुनि, ब्रह्मवेत्ता आ करके, बेटा! उसे जनक की उपाधि नहीं प्रदान कर देते। एक स्वर आता है, प्रातःकालीन एक ध्वनि हुई और उस ध्वनि में ध्वनित हो करके, मेरे प्यारे! ध्वनि में ध्वनित हो करके अपने में अनुभव करने लगे कि हमें भी जनक बनना है, राजा जनक की आभा में रत्त होने लगे।

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, ये जो पठन पाठन की जो प्रतिक्रियाएं होती रहती हैं। ये परम्परागतों से ही, महान और पवित्रता में सदैव रत्त रही है, प्रत्येक मानव, इस प्रातः काल की पवित्र बेला में, मानो वेदों का उदगान प्रत्येक प्राणी गाता रहता है। वह किसी भी रूप में गान गाता रहे, परन्तु वेदों की प्रतिभा का वर्णन, प्रायः उसके मस्तिष्कों में रहता है, जहाँ हम यह विचारते हैं कि

हमारा जो नित्य प्रति जो क्रियाकलाप होता रहता है, मानो वह इतना विशुद्ध और महानता से गुथा हुआ हैं, हमारे यहाँ, जब वैदिक आचार्यों ने एक क्रियाकलाप बनाया, कि मानव जब इस संसार में आया है, तो ये कर्मबद्ध हो करके आया है। इसके जो कर्मों की प्रतिभा है, वह बड़ी विचित्रतम मानी गई है, तो इसका कोई न कोई, इसका कर्मबद्ध, मानो क्रियाकलाप में, होना चाहिए हमारे यहाँ नाना ऋषि मुनियों की विचारधाराएं मानो वह तपो में रही हैं।

कर्म से मानव का आगमन

ऐसा मुझे स्मरण है, ऐसा मानो साहित्य से भी प्राप्त हुआ हैं, सृष्टि के प्रारम्भ में क्योंकि मानव जब कर्मबद्ध हो करके इस संसार में उसका आगमन हुआ तो जो आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता थे, उन आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ताओं ने एक जीवन की रूप रेखा का निर्माण किया। **परन्तु वह निर्माण तपस्वियों के द्वारा होता है। क्योंकि तपस्वी जन इस वाक् को जानते हैं, कि ऐसी मानव की भूमिका होनी चाहिए, उसके क्रियाकलापों की, जिससे वह रूढ़ि न बन पाए।** क्योंकि अज्ञान होगा तो रूढ़ि अवश्य होगी, क्योंकि हमारे यहाँ दो प्रकार की रूढ़ियों का वर्णन प्रायः वैदिक साहित्य में भी आता रहा है। एक रूढ़ि वह कहलाती है जिससे माता प्रीति में रत्त हो करके पुत्र का पालन करती हैं, एक रूढ़ि वह होती है, वह आचार्य कुल में ब्रह्मचारी जब प्रवेश करता है तो मानो वह उसका एक क्रियाकलाप बनाता है, और उसको सीमाबद्ध कर देता हैं। मानो वह रूढ़ि ब्रह्मचारी के विचारों में रूढ़ि बन सकती हैं। परन्तु जो वैदिक साहित्यों का जो क्रियाकलाप है उसमें रूढ़ि नही बन पाती, तो इनको किसी रूप में रूढ़ि नही उच्चारण कर सकते, क्योंकि यह तो सीमा में हैं, रूढ़ि उसे कहते हैं जो सीमा से पृथक हो जाती हैं। जिसमें अति हो जाती है। और अति

के ग्रा जाने से मानो देखो, उसमें ग्रज्ञानता भासने लगती हैं, ग्रौर वह जब ग्रज्ञानता ग्रा जाती है, तो वही मानव का मानव पिपासी बन जाता हैं। तो परिगाम यह मैं उच्चारगा कर रहा था पुत्रों! मानो सृष्टि के प्रारम्भ में भी इस मानव के क्रियाकलाप की एक, धारा का निर्मागा किया, ग्रौर निर्मागावेत्ताग्रों में कुछ ऋृषि मुनियों ने जो तपश्चर ग्रौर ब्रह्मचारी थे, ब्रह्मवर्चोसि थे, उन्होंने विशाल तप किया ग्रौर तप करने के पश्चात, उन्होंने इस मानवतव को बाह्य ग्रौर ग्रान्तरिकता में दोनों में दृष्टिपात किया। यह बाह्य क्या है? ग्रौर ग्रान्तरिक क्या है? परन्तु जो ग्रान्तरिकता उसको बाह्य रूपों में धारगामि ब्रह्मे वाचाः, उसको बाह्य जगत में लाने का प्रयास किया, ग्रौर वह लाया गया। परन्तु उसका परिगाम यह हुग्रा, कि उन्होंने, मानव की एक भूमिका बनाई, ग्रौर विद्वता ग्रौर वेद की प्रतिभा के रूप में निहित रहे। ऋृषि मुनियों ने यह विचारा, तपस्या के द्वारा कि उन्होंने बेटा! कहीं प्रागा ग्रौर ग्रपान को दोनों को याग में लाने का प्रयास किया। दोनों को यागमयी में, मानो स्वीकार करके, उन दोनों का समन्वय किया। जब समन्वय प्रागा ग्रपान का किया, तो उसमें व्यान ग्रौर समान का भी समन्वय किया, जब मानो देखो, इनका समन्वय हुग्रा, तो उदान का चित्त के मगडल से उसका समन्वय हो गया।

जब इस समन्वय की चर्चा ग्राई, जब समन्वय में ऋृषि मुनियों ने समाधिष्ट हो करके, एक एक मानो ग्राभा को एक दूसरें में पिरोएं हुई उन्होंने दृष्टिपात किया। जब एक दूसरें मैं पिरोने की विवेचना हुई, तो मानो देखो, वेदमन्त्रों में ऐसे शब्द की मानो उनके समीप एक ऐसे शब्द की रचना, उनके समीप ग्राने लगी, जो मानो देखो, एक ध्वनि के रूप में परिगात हुग्रा, ग्रौर वह ध्वनित होता हुग्रा, मानो देखो, उसको ग्रो३म् रूपी सूत्र भवा सम्भवा वह ध्वनित होने लगा। क्योंकि बाल्य का जब जन्म होता

हैं, तो ऋषि मुनियों ने सोचा कि वह तो एक अहंकार है, मानो अहंकार कहलाता हैं। उस अहंकार को, उन्होंने ओ३म् रूपी सूत्र से, उसका समन्वय कर दिया। जब मानव देखो, समाधिष्ट प्राणी हुआ, उन्होंने प्राण और अपान को दोनों का समन्वय करने का प्रयास किया, तो दोनों के मिलान होते ही, ध्वनि का जन्म हुआ, और वह ध्वनि को मानो, वह जब ध्वनि ध्वनित होने लगी, तो उस ध्वनि को ही मेरे पुत्रों! उन्होंने मानो उनके लिए हम उसको भी अंग कृतियों में रत्त करने लगे, उसको अहंकार के रूप में, मानो जब उसके ऊपर मन्थन किया गया। तो वह भी एक ओ३म् की ध्वनि बन गई। परन्तु जब ध्वनि बन गई, तो विचारा गया क्या यह जो जितना भी संसार का साहित्य है, अथवा वैदिक स्रोत है, उसको इसके प्रारम्भ के गर्भ में, प्रारम्भ के ही रूपों में मानो देखो, ओ३म् ध्वनि का प्रतिपादन होता, और ओ३म् जो ध्वनि है। वही अहंकार कहा जाता है। वही बाल्य के जन्म होते ही मानो देखो, उसकी स्मरण शक्ति उसके हृदयों में मानो रूग्णस्या में मानो निहित रहती है।

साथ प्रकार की धाराएं

तो विचार विनिमय क्या है पुत्रों! तो मानो यह मानव की भूमिका बन गई, क्रियाकलाप की भूमिका बनी, तो मानो देखो, यह विचारा गया, कि यह जो प्रकृति हैं, हमारा जो मानो प्रत्येक जो द्वार है, उस द्वार का समन्वय मानो प्रकृति से रहता है, और प्रकृति में ही सात प्रकार की धारा कहलाती है। वह सात प्रकार की धारा जिसमें मानो एक धारा का नाम जमदग्नि कहा गया है, द्वितीय धारा का नाम विश्वामित्र कहा गया, और तृतीय धारा का नाम वशिष्ठ कहा गया, और चतुष का नाम कश्यप् कहा गया, और पंचम धारा का नाम मानो गौतम, के रूप में परिणत हुआ, और देखो, वह जो सातवी जो धारा हैं उसका नाम अत्रि कहलाया। तो यह

मानो देखो, सात प्रकार की धाराओं का जन्म हुआ, वह सात प्रकार की धाराओं के रूप में मानो उनको सबको ऋषि कहने लगे, उन्हीं को सप्त होता कहने लगे, मेरे प्यारे! देखो, यह वेद के मन्त्रों के भी ऋषि मुनियों ने मानो समाधिष्ट हो करके इन शब्दों की उनकी रूप रेखा बनाने के वह तत्पर हुए, क्या यही वास्तव में हमारा जीवन है, हम जब इस प्रकार की धाराओं को लाने का प्रयास करेंगें। तो हमारे मानवीय जीवन की धारा विचित्र बन सकती है, तो मानो देखो, आगे जब उन्होंने और गम्भीरता से अध्ययन किया, अध्ययन करने के पश्चात मानो देखो, सम्ब्रव्हे वाचलोकि सम्भवा वेद की इस आख्यिका को ले करके बेटा! उसको अन्तर ध्वनि में ले गएं। अन्तर ध्वनि जो मानो मस्तिष्क के अग्रभाग में जिसे त्रिवेणी कहते हैं, जहाँ ईंगला और पिंगला दोनों का समन्वय होता है। तो वहाँ एक ध्वनि का जन्म हुआ, और वह जो ध्वनि है वह ध्वनित हो करके मानो देखो, वह बाह्य जगत मे ध्वनित हो करके मानव के समीप आई, तो मानव देखो, ऋषि मुनियों ने बेटा! देखो, प्रारम्भ में ही सृष्टि के प्रारम्भ में ऋषि मुनियों ने विद्यमान हो करके बेटा! यह विचारा कि मानव का एक क्रियाकलाप होना चाहिए। क्योंकि मानव का यह जीवन यह सुगन्धि ही चाहता है, यह मानो दुर्गन्ध नही चाहता, दुर्गन्ध चाहता है, यह ऊर्ध्वा में जाना चाहता हैं। क्योंकि ऊर्ध्वा में उड़ान उड़ने वाला परमाणु हैं, वह ऊर्ध्वा में भी जाना चाहता है। वह ध्रुवा में भी गति करना चाहता हैं, मानो देखो, यह मध्य में भू में भी यह गति करन चाहता है जब इस प्रकार मेरे प्यारे! देखो, ऋषि मुनियों ने अपना समाधिष्ट हो हो करके ये सब उनके समीप आ गया तो मानव उनके प्रातःकाल से ले करके सांयकाल तक के लिए बेटा! उन्होंने इसकी एक भूमिका बनाई और इसके मानो देखो, भूमिका बना करके, कहा हे मानव! तू प्रातःकाल की पवित्र बेला में, अपने आसन को त्याग,

मानो देखो, प्रातःकाल की पवित्र बेला में, आसन को मानव ने त्यागा, त्यागने के पश्चात अपनी भूमिका बनाता हैं, अपनी शारीरिक क्रियाओं से निवृत्त होता है, निवृत्त हो करके मानो देखो, वैदिक आचार्यों ने, बेटा! पांच प्रकार के यागों का चयन किया, उस काल में। ने यह पांच प्रकार के यागों की जो उपलब्धि है, ये सृष्टि के प्रारम्भ से हुई, ये पांच प्रकार के यागों की उपलब्धि हुई और पांचो प्रकार का याग क्या है हे मानव! तू प्रातःकालीन अपनी शारीरिक क्रियाओं से निवृत्त हो करके, और तू प्रभु के समीप जाने का प्रयास कर। मानो तू ब्रह्मयाग कर, बेटा! गृह में, गृह आश्रम में पति पत्नी हैं, तो उसमें ब्रह्मयाग में रत्त हो जाना चाहिए। प्रातःकाल में ब्रह्मचारी, आचार्य दोनों ने ब्रह्मयाग करना चाहिए, वह ब्रह्मयागी बन जाएं, देखो, जब ब्रहे मुनिवरों! देखो, कहीं भी, किसी भी स्थली पर कोई मानव विद्यमान है, वह ब्रह्मयागी बन जाएं, क्योंकि प्रातःकाल में ये जो जितना प्राणी मात्र है, मानो आत्मवत है, यह सर्वत्र प्रातःकालीन अपनी क्रियाओं से निवृत्त हो करके, गान गाता है, यह ध्वनित हो रहा है, मानो देखो, प्राण, जो प्राणी हैं प्राणों से ध्वनित हो रहा हैं जो जीवात्मा प्राणों को समूह ले करके रत्त रहता है, वह गान गा रहा हैं तो प्रातःकालीन क्या जो मानो जितने भी परमात्मा के राष्ट्र में, प्रभु के राष्ट्र में, जितना भी प्राणी मात्र हैं, वह सब एक गान गा रहा है, और वह गान गाता हुआ अपने में प्रसन्न हो रहा है, इसी प्रकार प्रातःकालीन मानो देखो, तुम ब्रह्मयागी बनो और तुम नाना प्रकार के अज्ञान में प्रवेश न करते हुए, जो मानो देखो, तुम्हारे मस्तिष्क में एक ध्वनि हो रही हैं और वह मानो देखो, स्वरों का ज्ञान हो रहा हैं, प्रत्येक वेदमन्त्रों में मानो देखो, ध्वनि होती हुई प्रतीत होती हैं। वह ध्वनित होता हुआ दृष्टिपात आता है, जब वेद का याचक, वेद के गर्भ में, वेद की देखो, वह भूमिका बनाने लगता है, जब उसका गान गाता हैं, तो प्रत्येक

वेदमन्त्र उसके समीप मानो देखो, एक ध्वनि बन करके रहता हैं। प्रत्येक वेदमन्त्र अपनी आभा में रत्त और विज्ञान की धाराओं की उपलब्धि करने वाला है, ब्रह्मयाग की उपलब्धि करने वाला है, क्योंकि जैसे एक वेदमन्त्र हैं, परमात्मा का रचाया हुआ ज्ञान और विज्ञान उसमें निहित रहता है, परन्तु परमात्मा का जो विशाल विज्ञान है, अथवा ज्ञान है, उसकी रचना का स्वयं नृत है। उसके लिए मुनिवरों! देखो, मानव सदैव विचारता रहता है। प्रातःकालीन मानो देखो, ब्रह्मयाग का अभिप्रायः क्या है? क्या हम परमपिता परमात्मा के विचारों को देखो, उसके उपासना के रूप में, उसमें हम रत्त हो जाएं, और उपासना करते रहे हैं, हे देव! तू महान और विचित्र बन करके, तू हमारे अंग संग रहने वाला है, तू अन्तरात्मा में विद्यमान हैं मानो देखो, अन्तरात्मा हमारी हृदय रूपी गुफा में विद्यमान है और हृदय, आत्मा रूपी गुफा में मानो देखो, उसे ब्रह्म याग कहते हैं। वह चैतन्य देव है। मानो देखो, प्रतिभा रूप में रत्त रहने वाला हैं, तो वह जब रहता है तो वह मानो देखो, उसको ब्रह्म याग कहते हैं। जो ब्रह्मयाग की चर्चाएं मुनिवरों! हम मानो इससे पूर्व काल से भी कर रहे थे, आज भी मुझे स्मरण आ रहा है, क्या हमें ब्रह्मयाग करना चाहिए। ब्रह्मयाग का अभिप्रायः यह है कि ब्रह्म के समीप जाने का हमें प्रयास करना चाहिए, मानो देखो, कैसे जाता है प्राणी, प्रातःकाल की पवित्र बेला में, मानवीय जीवन को, वह व्यष्टि से समष्टि में प्रवेश करता है, वह समष्टि में ले जाता है, देखो, यह संसार का जितना भी वैभव है, संसार की जितनी भी वृत्तियाँ हैं, ये सब मानो देखो, व्यष्टि में ले जाने वाली हैं और जब मानव इनसे उपराम होता है क्या इनके मूल में क्या है प्रत्येक वस्तु के मूल में कोई न कोई वस्तु तुम्हें दृष्टिपात आयेगी। मानो देखो, जब तुम मन्थन करते करते, किसी वस्तु का मानो जब उसके अन्तिम चरण में पंहुचोगे, अन्तिम रूप में

प्रवेश हो जाओगे वहाँ स्थिर रहने का नाम ही मेरे पुत्रों! देखो, प्रभु की पगडण्डी को ग्रहण करना है। जैसे एक मानव किसी के मूल में जाना चाहता है, विचारता है क्या यह सतोगुण क्या है? विचारने लगता है, कि तुझे सत्य उच्चारण करना है, विचारता है सत्य क्यों उच्चारण करना है? मानो सत्य के गर्भ में वह इस वाक्यों को विचार करके मानो उसके गर्भ में प्रवेश कर जाता हैं। और वह विचारता है कि सत्य ही है। संसार में प्रत्येक अंग और धाराएं मानो सत्यता के गर्भ में निहित हो रही हैं। मानो सत्य ही सत्य है जगत में, देखो, पालन करना भी सत्य है देखो, मानव से प्रीति करना भी सत्य है, जब सत्य के गर्भ में प्रवेश जाओगे सब मानो सत्य ही सत्य मानो देखो, वह तुम्हें दृष्टिपात आने लगेगा तो वह व्यष्टि से तुम्हें समष्टि में प्रवेश होना है। विचार यही है कि व्यष्टि और समष्टि दोनो के रूप में ही तुम्हें रत्त हो जाना हैं।

विचार विनिमय क्या मुनिवरों! देखो, उसके मूल में, जब विचारोगे तो सत्य के मूल में विचारते विचारते अन्त में, मानो देखो, प्रभु तुम्हें दृष्टिपात आने लगेगा। जब तुम मानो देखो, रजोगुण में शासन कर्त्ता के गर्भ में पंहुचोगे कि यह रजोगुण तो है परन्तु इसके गर्भ में शासनकर्त्ता है। मानो देखो, माता, पुत्र पर शासन कर रही है और शासन किस लिए कर रही है? माता यह चाहती है कि मेरा शासन बाल्य पर इतना होना चाहिए, जिससे मैं मानो देखो, अपने पुत्र को महान बना दूं, जैसा मैंने पुरातन काल में निर्णय देते हुए कहा था, कि अपने ब्रह्मचारी को अनुशासन में लाना चाहता है, परन्तु वह रजोगुण है रजोगुण के गर्भ में सत्य की प्रतिभा है, और वह मानो देखो, रजोगुण में अपने ब्रह्मचारी को महान, पवित्र बनाना चाहता है, सुचरित्र हो, सुविचारक हो, सु गार्हपथ्य हो, सु अग्निवेत्ता हो मानो देखो, इस प्रकार की भावना उसके गर्भ में रहती है। विचारता

विचारता मानव यह अनुशासन को विचारते रहो, वह विद्या की प्रतिनिधि क्रिया बन जाती हैं, वह एक क्रिया बन करके अन्त में देखो, उस अनुसन्धान मानो देखो, उस अनुशासन में वह प्रभु की कृति दृष्टिपात आती हैं। क्योंकि यह जो जितना जगत है, यह सब अनुशासन में हैं, यह जितना भी जगत है, यह सब अनुशासन में हैं, सूर्य प्रातःकालीन उदय होता हैं, उदय हो करके शनै शनै किरणों को लाता हैं, पृथ्वी पर आच्छादित हो जाता है, परन्तु वह सूर्य केवल एक अनुशासन में ही दृष्टिपात आने लगता है, प्रातःकाल में, मानो देखो, वह धीमा धीमा प्रकाश होता है, शीतल होता है, रात्रि के परमाणुओं को मानो देखो, वह उसको उष्ण बनाने लगता हैं। और जब मध्य में देखो, सूर्य आता हैं, तो उसका जीवन तेजोमयी बन जाता है, जब तेजोमयी बन करके, प्रकाश भी देता हैं, उष्ण भी बनाता है, तेजस्वी भी बना हुआ है, परन्तु देखो, वही धीमा ब्रहे वाचक बन करके ही मेरे प्यारे! देखो, सायंकाल को पुनः धीमा बन करके, रात्रि के परमाणु जागरूक हो जाते हैं, और उस तेजोमयी परमाणुओं में रत्त हो जाते हैं, परिणाम यह कि सांयकाल को वह सान्त्वना में प्रवेश हो जाता है। तो विचारता है याचक, विचारता है देखो, अनुशासनवेत्ता हो देखो, यह जो प्रभु का कैसा प्रिय अनुशासन है। मानो देखो, सूर्य अनुशासन में हैं, पृथ्वी अपने मध्य में मानो देखो, भू मध्य में प्रतिक्रियाओं में रत्त हो रही है, नाना प्रकार के परमाणुओं को ले रही है, जिन्हें कहाँ कहाँ से परमाणु ले करके, कहीं अग्नि से लेती हैं, तो कहीं चन्द्रमा से लेती है, तो कहीं सूर्य से लेती हैं, मानो देखो, प्राण वायु से ले लेती हैं, और अवकाश अन्तरिक्ष से ले करके मानो देखो, पृथ्वी अनुशासनमयी कहलाती हैं। तो विचारता हुआ मुनिवरों! देखो, अनुशासनवेत्ता यह विचारता है कि अरे, यह तो सर्वत्र जगत ही अनुशासन में हैं, मानो देखो, माता अपने पति के समीप मानो देखो, जब

गृह स्वामिनी बन करके, अपनी वार्त्ता प्रगट करती है, तो उसके अनुशासन में मानो एक विचित्रता आ जाती है, पुत्र के समीप जब अनुशासन में प्रवेश होती है, तो वहाँ एक विचित्रता आ जाती है मानो देखो, पिता के समीप जाती है कन्या, तो वहाँ अनुशासन एक भिन्न बन जाता हैं। परन्तु भिन्न बन जाने से अन्त में देखो, वह अनुशासन की जब प्रतिक्रियाओं में जब अन्तिम छोर पर पंहुचोगे, तो बेटा! प्रभु ही दृष्टिपात आने लगेगा। तो मेरे प्यारे! देखो, जब इस प्रकार का जो यह ब्रह्मयाग है, यही तो मानो देखो, व्यष्टि से मानव को समष्टि में ले जाता हैं। मेरे पुत्रों! देखो, नेत्रों की ज्योति हैं, वह ज्योतिवान बन करके, मुनिवरों! देखो, वह उस ज्योति के समन्वय को विचारने लगता हैं विचारता हुआ नाना देवताओं के जड़ देवताओं के समीप चला जाता है, चैतन्य देवताओं के समीप चला जाता हैं, जाता जाता बेटा! जब दूरी चला जाता है, तो अन्तिम छोर मुनिवरों! देखो, मौन हो जाता हैं।

तो विचार विनिमय क्या मैं बेटा! आज तुम्हें यह उच्चारण कर रहा हूँ कि मानव को ब्रह्म याग करना चाहिए, जब यह ब्रह्मयागी बनेगा तो अज्ञान नही भासेगा अज्ञान उस काल में भासता है, जब यह प्रभु की सृष्टि को निहारता नही है। जब यह प्रभु की महानता को अपने में धारण नही करता है, जब यह मानो देखो, उसके चिन्तन में, अपने को विशाल नही बनाता, तो यह नाना प्रकार का मानो देखो, तीक्ष्ण क्रियाकलाप करता हुआ, अपने मानव के जीवन को देखो, निकृष्टता में ले जाता हैं। तो विचार विनिमय क्या, मैं आज पुत्रों! विशेष विवेचना नही, यह बेटा! देखो, जब मानो देखो, महाराजा अश्वपति के यहाँ, जब मानो देखो, जब हम अपने में मानो देखो, ब्रह्मचारियों के प्रातःकालीन शिक्षा देते, तो ब्रह्मचारी व्यष्टि और समष्टि की विवेचना, विद्यालय में ही प्राप्त कर लेता है। क्योंकि विद्यालय में, आचार्य और ब्रह्मचारी दोनों को मानो देखो, याग करना चाहिए, जिसे ब्रह्मयाग

कहते हैं। जैसे माता पुत्र को भी, मानो बालिकाओं को भी देखो, वह अपने में ब्रह्मयाग कराए, जिससे अज्ञान न आए, क्योंकि अज्ञान का आ जाना ही रूढ़ि है अज्ञान का आ जाना ही मानव को मानव के भक्षण करने की प्रवृत्तियां आ जाती हैं।

तो परिणाम क्या है आज मैं तुम्हें यह उच्चारण कर रहा हूँ, क्या मानव को प्रातःकालीन, ब्रह्मयाग करते करते मुनिवरों! देखो, मौन हो जाना चाहिए, और जब यह मौन हो जाता है, क्योंकि ब्रह्मयाग में परिणत होता हुआ, उसमें अंग को भूमिका बनाता हुआ, यह बेटा! देखो, इस मानव प्रकृति के क्षेत्र में ले जाता हैं, और प्रकृति के क्षेत्र को ले करके, यह ब्रह्म में प्रवेश करा देता है, ब्रह्म में इसकी समाहितता हो जाती है और जब यह समाहितता हो जाती है। तो यह ब्रह्मयाग कहलाता हैं। ब्रह्मयाग का अभिप्रायः तुमने जान लिया होगा, पुत्रों! कि हम ब्रह्मयाग किसे कहते हैं? प्रातःकालीन मानो देखो, विद्यमान हो करके, वह वेदों की ध्वनियों में ध्वनित हो रहा है। वह गान गा रहा हैं, जटा पाठ में गान गाता हुआ मानो देखो, अपने को माला पाठ में ले जाता हैं, माला पाठ में ले जा करके, वह मानो देखो, बाह्य जगत में जब ध्वनित हो करके ही मानो उन प्रवृत्तियों को, आन्तरिक जगत में ले जाता हैं, आन्तरिक जगत में बेटा! वह ध्वनियां होती हैं, वह नृत्त हो रहा है, मुनिवरों! देखो, जैसे सम्भवा लोकाम् यह प्रकृति अपने में नृत्त कर रही हैं, केवल मानो देखो, उस ब्रह्म के सन्निधान मात्र से ही इसका नृत्त प्रारम्भ हो जाता है, यह कैसा नृत्त है पुत्रों! मानो देखो, उस नृत्त के लिए आज मानव को यह विचारने लगे, कि यह विचार मंगलं ब्रह्मे वह कैसा नृत्त है, बेटा! वह सबके समीप हो रहा है तो मानो देखो, एक आभा में हो रहा हैं तो मुनिवरों! देखो, वह जो नृत्त हो रहा है, वही नृत्त, आन्तरिक जगत में जब योगेश्वर मानो देखो, जब साधक अपने

में प्रवेश करके बेटा! देखो, आन्तरिक मस्तिष्क में ले जाता है, आन्तरिक ब्रह्मरन्ध्र में ले जाता है, तो बेटा! वहाँ पिपाद झरना झरता रहता है, अमृत की धाराओं का गमन हो रहा है। मेरे पुत्रों! देखो, वहाँ ब्रह्माण्ड की धाराओं का दिग्दर्शन किया जा रहा है, परन्तु ब्रह्म का चिन्तन किया जा रहा है, वह ब्रह्म में समाधिष्ट हो करके ही लघु मस्तिष्क में प्रवेश करके, बेटा! अपने को महान बनाता हुआ, वह प्रभु को ही अपने में दृष्टिपात करने लगता है।

तो मुझे पुत्रों! आज इस प्रभु के ब्रह्मयाग की चर्चा, तो करता ही रहूँगा यह तो बड़ा विचित्र मानो एक जगत हैं, एक वेद का मन्त्र है एक वेद की धारा हैं। मानो देखो, उसी में से नाना प्रकार का यह जगत की प्रतिभा का जन्म होता हैं। तो मेरे प्यारे! वेद के मन्त्रों के द्वारा मुनिवरों! देखो, उपासना करता हुआ उपासक और ब्रह्मयाग में परिणत हो जाता हैं। एक वेदमन्त्र को लेता हैं, उसी वेदमन्त्र की विचित्र भूमिका बनाता हुआ, अन्त में बेटा! देखो, अन्तिम छोर से वह मौन हो जाता है। तो विचार विनिमय क्या, मेरे प्यारे! देखो, सबसे प्रथम, शारीरिक क्रियाओं से निवृत्त हो करके, मानव को ब्रह्मयाग करना चाहिए। मानो देखो, प्रातःकाल की पवित्र बेला में ब्रह्मयाग होना चाहिए, जब पति पत्नी गृह में, ब्रह्मयाग को करते हैं, तो उनका गृह स्वर्ग और मानो देखो, एक महान और पवित्र बन जाता है। जिनके विचार उनके ब्रह्म के गुथे हुए, विचार उस मानो देखो, उस वायुमण्डल में प्रवेश हो जाते हैं। बेटा! यह वाक् कहाँ से जन्म हुआ, इस वाक् का कोई जन्म है, इस वाक् ने कहीं जन्म लिया हैं। बेटा! यह कहाँ ले आया हूँ?

आज मैं तुम्हें आओ, तुम्हें शोभनी ऋषि के द्वार पर ले जाना चाहता हूँ, शोभनी ऋषि महाराज एक वेदमन्त्र का अध्ययन कर रहे थे और वह

अध्ययन करते करते वेदमन्त्र यह मंगलं ब्रहे वेदमन्त्र का वाकां भविते ब्रह्मा वाचौ सम्भव लोकां व्याप्तानि पथनं ब्रह्मे व्याप्तानं ब्रहा हृदा जब उन्होंने यह वाक्, यह वेदमन्त्र का अध्ययन किया, तो शोभनी ऋषि ये विचारने लगा कि वेदमन्त्र ऐसा क्यों कहता है क्या यह जो शब्द है, पवित्रता के जो शब्द है यह हमारे गृहों में, हमारे आश्रमों में भ्रमण करते रहते हैं। मानो देखो, जब यह उन्होंने श्रवण किया, वेदमन्त्र में जब इसके ऊपर मन्थन करने लगे विचारते विचारते रहे तो मानो देखो, यह वाक् उनके आँगन में आ गया, तो उन्होने मानो देखो, प्रातःकालीन मानो देखो, वेदज्ञ ध्वनि को गाते रहते। तो गाते रहते तो बेटा! एक समय उनके यहाँ एक उजवान केतु मानो देखो, उनके समीप आ गएं उजवान केतु मानो देखो, वह उसकी प्रवृत्ति तामसिक प्रवृत्ति बन गई थी, परन्तु जब वह ऋषि के जहाँ उसको बारह वर्षों तक वेद का अध्ययन करते करते मानो देखो, वह वेद जब उनके समीप आया, तो दैत्य के आने से उसकी प्रवृत्ति में अन्तर्द्वन्द्व बन गया। जब अन्तर्द्वन्द्व बन करके मानो देखो, अन्तर्प्रकाश में आ गया, जब अन्तर्प्रकाश में आ गया तो मानो देखो, वह ऋषि के चरणों की वन्दना करने लगा, तो शोभनी ऋषि बोले कि हे दैत्यराज! तुम चरणों की वन्दना क्यों कर रहे हो? तुम तो मानव को नष्ट करने वाले हो। उन्होंने कहा प्रभु! मैं आज तुम्हारे इस आसन पर आया हूँ, इतनी दूरी के आसन पर, एक मैंने एक कवच को दृष्टिपात किया हैं, और जब मैं उस कवच के अन्तर्गत आ गया हूँ तो मेरे मनों की मेरे हृदय की प्रवृत्तियों में मानो देखो, अन्तर्प्रकाश में मेरा अन्धकार प्रकाश में आ गया है, भगवन!, यह क्या कारण है? तो मानो देखो, जब शोभनी ऋषि के आँगन में यह वाक् आया अहो! इस वेदमन्त्र के जो उच्चारण करता है। तो वाणी का समन्वय करके, मन और प्राण के सूत्र में ला करके तो मानो देखो, यह वही पवित्र धाराएं

देखो, इस वायुमण्डल में छा गई हैं और इतनी दूरी पर जो प्राणी आ जाएगा वही पवित्रतम बन जाएगा मानो देखो, वह दैत्य पवित्र हो करके ही मानो देखो, वह तपस्वी बन गया। वह ऋषि के चरणों में विद्यमान हो गया, उन्होने बारह बारह वर्ष के पुनः देखो, ऋषि ने अनुष्ठान किए उस दैत्य राज ने भी अनुष्ठान किए, अनुष्ठान करके मानो देखो, वह ऋषि बन गया। उसी ऋषि का नाम मुनिवरों! देखो, शाकल्य मुनि बन गया। वह दैत्य न रह करके शाकल्य मुनि बन गया मेरे पुत्रों! देखो, मैं कहाँ तक सूक्ष्म और गम्भीर वाक्यों में तुम्हें ले जाऊं। यह तो बड़ा एक विचित्र मानो देखो, जगत है देखो, इसके ऊपर मानो ऋषि मुनियों ने बहुत अनुसन्धान किया।

तो विचारा गया तो इसी वाक् की रचना मेरे पुत्रों! देखो, ऋषि मुनियों से हुई है क्या गृहों में क्या वनों में रहने वाला हो मानो वायुमण्डल में जितना वाक् शक्ति मानव की पवित्र होगी, उतना ही गृह हो मानो बालक ब्रहे मानो देखो, पर्व हो वह वही उसी पवित्रता की धारा में रत्त रहता हैं वह सत्य ही सत्य दृष्टिपात आता रहेगा। माता अपने पुत्रों को जब सत्यता का उपदेश देती हैं, तो पति और पत्नी दोनों गृह में जब वेदज्ञ ध्वनि का पठन पाठन करते हैं तो बाल्यों की निन्द्रां के मानो उनके श्वासों के द्वार पर भी मानो उन्हीं परमाणुओं की प्रतिभा उनके हृदयों में प्रवेश कर जाती है मेरे पुत्रों! देखो, यह वाक् मानो देखो, सदैव से सिद्ध हो गया है कि मानव को सदैव अपनी वाणी में पवित्र रहना चाहिए मानव को अपने में तपस्या का मानो अपना क्रियाकलाप बनाना चाहिए जिससे मानव अपने में जीवनता में पवित्र धाराओं में रत्त होता हुआ मुनिवरों! देखो, अपने को पवित्र बनाता रहे। अपनी वाणी को वेदज्ञ ध्वनि में परिणत करता रहे, इस वेदा ध्वनि में ही, अपनी ध्वनि को जानता हुआ, मुनिवरों! देखो, वह जो ओ३म् रूपी ध्वनि हैं वह उस ध्वनि में वह ध्वनित रहना चाहिए, वह ध्वनि

एक शाश्वत हैं। वह मानो देखो, सृष्टि के प्रारम्भ से, वेदमन्त्रों के प्रारम्भ की एक धारा हैं, मानो भूः भुव स्वः में यह सर्वत्र वेदमन्त्र गुथा हुआ है। तो इसीलिए हमें देखो, उस धारा में रत्त हो जाना चाहिए। मानो देखो, आज मैं विशेष चर्चाएं देने नही आया हूँ, विचार यह देने के लिए आया हूँ क्या हे मानव! तू मानव, प्रातःकालीन मानो देखो, उस ब्रह्म का याग कर, तू यागी बन, ब्रह्मयागी तू उस काल में बनेगा, जब तू मानो तेरी शान्त प्रवृत्ति बन जाएगी अपनी शुद्ध अशुद्ध मानो अपनी क्रियाओं से निवृत्त हो करके, प्रभु के गान में लग जा, क्योंकि वही मानो तेरा जीवन है वही तेरी धारा हैं, परन्तु देखो, इसके पश्चात वह संसार के भिन्न भिन्न कार्यों में देखो, शारीरिक रचना का व्यवधान मानो प्रथम किया गया है।

देवपूजा

तो विचार विनिमय क्या हैं मेरे पुत्रों! देखो, मैं तुम्हें यह उच्चारण कर रहा हूँ क्या प्रत्येक मानव को अपने में महान बन करके, प्रभु की प्रतिभा का मानो दिग्दर्शन करते हुए और मुनिवरों! देखो, ब्रह्मयागी बन जाएगा, इसके पश्चात मैं बेटा! देखो, द्वितीय जो कर्म है, वह मानो देखो, देव पूजा आता है। हमारे यहाँ पूजा के भिन्न भिन्न प्रकार के स्वरूप, हमारे वैदिक साहित्य में माने हैं। जैसे यह ब्रह्मयाग है, यह उपासना का काण्ड बन गया है, यह उपासना से अपने को देखो, समष्टि से व्यष्टि में ले जाना है। समष्टि और व्यष्टि मानो देखो, दोनों ही, जब मानव समष्टि में चला जाता हैं, तो वह नाना प्रकार की संकीर्णता से दूरी हो जाता है। मानो पाप कर्म में मानो प्रवृत्ति नही रहती, वह सदैव अपने में महान बन करके पवित्र बन जाता है। इसके पश्चात मानो देव पूजा का प्रसंग आता है। इस देव पूजा की चर्चा मैं तुम्हें कल प्रगट करूंगा। मानो देखो, देव पूजा के रूप में कितना मानो देखो, इसमें विचित्र धाराएं हमारे ऋषि मुनियों ने जानी हैं।

तो विचार विनिमय क्या, जो हमारे यहाँ ऋषि मुनियों का कर्म हैं, वह मानवीय धाराओं के आधार पर यह है कि मानव को कैसा बनना है, और कैसा बन करके हम जगत में चले, परन्तु नाना प्रकार की जो रूढ़ियाँ हैं, उन रूढ़ियों में प्रवेश नही होना चाहिए, अतिता मानो देखो, रूढ़ियों में अज्ञान आता हैं, उन रूढ़ियों की चर्चाएं, मैंने कई काल में तुम्हें दी हैं। मेरे पुत्र महानन्द जी ने भी रूढ़ियों की चर्चाएं की हैं, परन्तु देखो, मैं भी उन रूढ़ियों को बहुत समय से जान गया हूँ, कि वह रूढ़ि क्या हैं? मानो देखो, रुढियां सदैव अज्ञानता के आधीन है अज्ञान नही रहना चाहिए, ज्ञान के माध्यम से व्यष्टि और समष्टि में अपने को ले जाना चाहिए। मानो देखो, वही इसके विचारों की एक भूमिका बनती हैं, वह तपस्या का चलन हैं, हमारे यहाँ अनुष्ठानों का बड़ा वर्णन आता रहता है। अनुष्ठान भी, मेरे पुत्रों महानन्द जी ने एक समय कहा कि वह भी एक रूढ़ि बन गया हैं। अनुष्ठान का अभिप्रायः यह है क्या हम वेदमन्त्र को ले करके, अपने में किसी वाक् को ले करके अनुसन्धान कर रहे हैं। अनुसन्धान करके उसको अनुष्ठान में ला देते हैं। अनुष्ठान का अभिप्रायः यह है कि उसको जानना, जिस वस्तु को हम जानना चाहते हैं, उसको हम जाने और जान करके ही मानो देखो, उसमें पिपासी रह करके, जिज्ञासा हो जाएं, उसका नाम अनुष्ठान कहलाता है। उससे मानव की आयु दीर्घ बना करती हैं। जैसे हमने एक वेदमन्त्र को लिया है, हमने ओ३म् को लिया हैं, ओ३म् की तीन मात्राओं को ले करके हम अग्रणीय बने हैं और उसका अनुष्ठान करते करते अनुसन्धान करते करते अपनी प्रवृत्ति को व्यष्टि से समष्टि में ले गएं हैं, तो मानो देखो, हमारा एक अनुष्ठान कहलाता हैं।

आज देखो, मेरे पुत्र महानन्द जी ने मुझे एक समय वर्णन कराया था अनुष्ठान के सम्बन्ध में क्या आधुनिक जो जगत हैं जहाँ यह वाणी का प्रवेश

हो रहा हैं, मानो देखो, इसमें अनुष्ठानों के भिन्न भिन्न रूप स्वीकार कर लिए हैं, मानो देखो, वह किसी वृत्तियों को मानो देखो, द्रव्य प्रदान करने का नाम ही अनुष्ठान स्वीकार कर लिया। क्या यह मेरे नामों का देखो, यह वेद मन्त्रों का जपन करेगा, यह अनुष्ठान स्वीकार कर लिया। परन्तु ऋषि मुनियों के अनुष्ठानों की जो प्रवृत्तियां थी, वह कितनी विचित्र मैंने अभी अभी वर्णन की है मैं एक समय मानो बाल्यकाल में अपने पूज्यपाद गुरुदेव के द्वारा पंहुचा तो उन्होंनें मानो चौबीस वर्षों का एक अनुष्ठान किया था, और वह अनुष्ठान क्या था? वह मानो देखो, वेदमन्त्रों की ध्वनि को माला पाठ में परिवर्तित करना चाहते थे, मानो देखो, माला पाठ के उद्गीत को जानना चाहते थे, उसका प्रादुर्भाव कहाँ से हुआ है? मानो देखो, उस पर अनुसन्धान होता रहा, अनुसन्धान करते रहे, तो पूज्यपाद गुरुदेव का जीवन मुझे स्मरण है। मानो देखो, वह बाह्य जगत को आन्तरिक जगत में ले गएं। मस्तिष्क में ले गएं जहाँ ध्वनियां मानो देखो, नाना प्रकार की ध्वनियां हो रही हैं, प्राण अपनी गर्जना कर रहे हैं, अपान से मिलान हो करके कौन सी गर्जना है? देखो, प्राण का समन्वय जब व्यान से होता है तो कौन सी गर्जना हैं? और उस गर्जना में जो वह ध्वनित ध्वनित हो रहती है, उस ध्वनि में उनमें क्या रहस्य है तो मानो देखो, उन ध्वनियों के रहस्यों को जान करके चौबीस वर्ष का इस प्रकार का अनुष्ठान किया हैं। तो वेद के मन्त्रों का और उनमें स्मरण आने लगा। तो मानो देखो, वेदों की ध्वनि मानव को वैसे ही कण्ठस्थ नही होती। परन्तु देखो, यह अनुष्ठान के रूप में यह भी अनुष्ठान है। एक मानव यह चाहता है कि मैं अपने द्रव्य को पवित्र बनाना चाहता हूँ, मैं अपने द्रव्य को अपने ग्रह को पवित्र बनाना चाहता हूँ, तो वह प्रातःकालीन मानो ब्रह्मयाग में परिणत हो जाएं। और ब्रह्मयाग करता हुआ, मानो देखो, बाल्य, उसका अनुसरण करेंगें। मानो गृह

में रहने वाले मानो सब उसका अनुसरण करेंगें। तो वह उसका जो विचार है, वह परमात्मा का वहाँ द्रव्य बन करके देखो, सात्विक बन गया हैं। गृह पवित्र बन गया है। द्रव्य की पवित्रता हो गई है, देव पूजा करने से, ब्रह्मयाग करने से तो मानो देखो, इस प्रकार का जो क्रियाकलाप, ऋषि मुनियों ने मानव को बेटा! सृष्टि के प्रारम्भ में निर्धारित किया था। यह बेटा! आज का हमारा विचार हैं। आज का विचार हमारा समाप्त होने जा रहा है, कल मैं इसकी देखो, देव पूजा के सम्बन्ध में, जो याग होता उसकी चर्चाएं मैं कल कर सकूंगा, आज का विचार हमारा क्या कह रहा हैं, कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए, हमें संसार सागर से पार होना है। बेटा! देखो, अपने को व्यष्टि से, समष्टि में प्रवेश कर जाएं, यही हमारा जीवन है यही हमारी पवित्रता है, यही हमारा ब्रह्मयाग है, मुनिवरों! देखो, यह चर्चाएं हम अब समाप्त करने जा रहें हैं। कल समय मिलेगा शेष चर्चाएं कल प्रगट करेंगें। अब वेदों का पठन पाठन होगा।

परन्तु देखो, पुरातनकाल में जब हम अपने पूज्यपाद गुरुओं के द्वार पर जाते थे, तो गुरु के द्वार पर जा करके शिक्षा अध्ययन करते, अध्ययन करते करते जब कोई शिक्षा उनके आंगन में नहीं आती, उनसे बारम्बार प्रश्न करते रहते थे। जब प्रश्न किया तो वे उसका उत्तर देते थे। भली भांति उसका उत्तर देते रहे थे और देते देते उस आभा में प्रायः परिणत हो गए। उन्होंने कुछ औषधियों का पान भी कराते रहते थे जिससे मानव के प्रज्ञा चक्षुओं में एक शक्ति प्रायः आती चली जाए। तो इस प्रकार हमारे यहाँ मानो परम्परगतों से ही प्रायः ऐसा होता रहा है। वह सखा, सखा कृतियों को वार्त्ता है। तो मेरे प्यारे! विचार विनिमय क्या हमें विचारना है कि हम कर्त्तव्यवाद में इतने महान् इतने प्रज्ञावी बन जाएं जिससे हम देवपूजा के

सुयोग्य बन करके उससे पूर्व हम ब्रह्म याग में परिणत हो जाएं। जब ब्रह्म को अपने में दृष्टिपात करता है, और अपने को ब्रह्म में, तो एक दूसरे में सजातीय बन जाते हैं। जब एक दूसरे में सजातीय बन जाते हैं तो वही प्रतिभा महान् बन करके मानव के क्रिया कलापों में प्रायः परिणत हो जाती है। उन्हीं क्रिया कलापों में मानवीय जीवन की धारा महान बनती चली जाती है।

मेरे प्यारे! देखो, जब महात्मा भृगु जीने यह वाक् स्वीकार कर लिया और महात्मा भृगु ने कहा प्रभु! आप को तो ज्ञान बड़ा अद्वितीय कहा जाता है। परन्तु देखो, ब्रह्मणा ब्रहे ब्रह्म याग को कहते है, याग का नाम भी ब्रह्म है मेरे पुत्रों! देखो, उसकी सर्वांग पूजा का नाम, यह ब्रह्म पूजा कही जाती है। मेरे पुत्रों! देखो, ये महात्मा भृगु ने, अपने वाक्यों को वर्णन किया कि ब्रह्मयाग किसे कहते है? ब्रह्मयाग कहते है जो ब्रह्म का चिन्तन करता है, मनन करता है और मनन करके मानो देखो, उसको क्रियात्मक बना करके, और वह उसी में रत्त हो जाता है, बेटा! वह ब्रह्मयाग कहलाया जाता है। वह ब्रह्मयाग हो रहा है ब्रह्मयाग में हम परिणत हो रहे है मेरे पुत्रों! देखो, ब्रह्मयागां ब्रह्म लोकां वाचप्रव्हा वह ब्रह्मयाग कहलाता है मेरे पुत्रों! देखो, ब्रह्मयाग में क्या है? क्या मुनिवरों! देखो, ब्रह्म में अपने में अपने को ब्रह्म में जो स्वीकार करता है, वह ब्रह्मयाग में परिणत हो गया है। मेरे पुत्रों! देखो, वही तो ब्रह्मवत कहलाया गया है। मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्म नाम परमात्मा का है, जो सर्वत्र मानो व्याप्त रहता है, व्यापक रहता है, और व्याप्त के रहने से, मेरे पुत्रों! देखो, वह ब्रह्म है। वह आनन्दमयी है। आत्मा का स्रोत है, आत्म तत्त्व बेटा! उसी से बनते है। तो विचार विनिमय क्या, मेरे पुत्रो! ब्रह्म किसे कहते है? हमारे यहां महात्मा भृगु ने, इस वाक् को बेटा! स्वीकार कर लिया, और महर्षि भृगु ने मुनिवरों! वहां से वह ब्रह्मा

जी से आज्ञा पा करके उन्होंने वहां से गमन किया बेटा! देखो, ब्रह्मा कौन है? ब्रह्मा उसे कहते है जो वेद के मर्म को जानता है, वेदज्ञ ज्ञान को अपने में धारण करता है, और मुनिवरों! देखो, वह उपाधि में ब्रह्मा कहलाता है। ब्रह्मा वर्णनं ब्रह्मे मेरे प्यारे! देखो, वह ब्रह्मा सब उपाधियां कहीं गई है। हमारे यहां वशिष्ठ मुनि की एक उपाधि है, वशिष्ठ उसे कहते है, जो ब्रह्मवेत्ता कहलाता है, और ब्रह्मनिष्ठ हो करके, मेरे पुत्रों! ब्रह्म की चर्चा करता है, वह ब्रह्मा कहलाता है। मेरे पुत्रों! देखो, महर्षि वशिष्ठ को ब्रह्मवेत्ता कहा जाता था, और महर्षि विश्वामित्र भी ब्रह्मवेत्ता बने परन्तु देखो, वह धनुर्याग करने से, बेटा! देखो, वह धनुर्यागी बन गएं।

माता के गर्भस्थल में जो पुत्र याग हो रहा है, वैसे ही एक ब्रह्म याग हैं, क्योंकि देवता जन, उसके समीप रहते हैं, देवता ही मानो देखो, सहायक बन करके, और परमपिता परमात्मा की जो चेतना है। वह चेतना बेटा! उसमें प्रवेश हो करके बेटा! उसमें निर्माण हो रहा हैं। जैसे भौतिक विज्ञानवेत्ता एक यन्त्र का जब निर्माण करता है, उसके निर्माण में मानो देखो, एक सूक्ष्मता के स्थूल के आँगन में प्रवेश करता है, सूक्ष्मता को जान करके, स्थूल में प्रवेश करके बेटा! स्थूलता का निर्माण करता है। नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण भी, इसी प्रकार होता रहता है। परन्तु एक वैज्ञानिक से यह प्रश्न किया जाएं क्या यह परमाणुवाद तुमने कहाँ से जाना हैं? तो मानो देखो, उसका भी अन्तर्हृदय यही कहता हैं क्या इसको मैं नही जानता, क्या मेरे परमाणुवाद का मूल क्या है? मानो देखो, उस परमाणुवाद का जो मूल है, वे परमपिता परमात्मा है, चेतना हैं, चेतना ही मानो देखो, स्थूल चेतना को जन्म देती रहती हैं। तो मेरे पुत्रों! देखो, जब ऋषि ने, इस प्रकार वर्णन किया, तो ब्रह्मणे वृतं देवाः तो मुनिवरों! देखो, इसको हमारे यहाँ, ब्रह्मयाग कहते हैं। ब्रह्मयाग का अभिप्रायः क्या है?

मुनिवरों! देखो, मानव जब अन्तर्मुखी हो जाता है, और अपनी इन्द्रियों के विषय को मानो देखो, उसको साकल्य कहते हैं, जैसे भौतिक यागी, पुरुष मुनिवरों! देखो, नाना प्रकार की औषधियों को एकत्रित करता हैं, मानो देखो, हृष्ट और विष्ट इत्यादियों को एकत्रित करके मुनिवरों! देखो, वह याग करता है, वह अग्नि के समीप जाता है, अग्नि के मुखारबिन्दु में प्रवेश करा देता है, इसी प्रकार आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता भी, मानो देखो, पंच इन्द्रियों के विषयों का साकल्य बना करके, और उस साकल्य को बना करके एकत्रित करके बेटा! ज्ञान रूपी जो हमारे हृदयों में अग्नि प्रवेश हो रही हैं, अग्नि प्रदीप्त हो रही है, मानो देखो, उमसें पंच इन्द्रियों का साकल्य बना करके, उसमें हूत कर रहा है, उसमें आहुति दे रहा है। मेरे पुत्रों! जो पंच इन्द्रियों का विषय साकल्य एक ही सूत्र में, जब सूत्रित हो जाता है, तो वही सूत्र मेरे प्यारे प्रभु से मानो सूत्रित हो करके मेरे पुत्रों! देखो, एक संसार रूपी माला का विचार हो जाता हैं।

आज मैं इस सम्बन्ध में कोई विवेक या अपना विचार नहीं प्रगट करने नहीं आया हूँ। विचार केवल यह है कि आज का हमारा वेदमन्त्र, जो यज्ञशाला में यज्ञमान विद्यमान है, वह यह कहता है, आओ, देवी! देव पूजा करने के लिए तत्पर हो, मानो देवयाग करने के लिए तत्पर हो। जिस प्रकार हम प्रातःकालीन, मध्यरात्रि के अन्तिम पहर में हम प्रायः ब्रह्म याग करते रहते हैं ओर अपनी प्रत्येक इन्द्रियों को उस महान परमपिता परमात्मा के गुणों से उनको गठित करते रहते हैं मानो उसमें वह कृतियों में रत्त रहने वाली इन्द्रिया। है परन्तु इसी प्रकार, आओ हम देव पूजा करें। क्योंकि देवयाग करने का नाम देव पूजा कहलाती है।

यह परम्परागतों से ही, मानो एक एक शब्द के ऊपर, मानो संलग्न होता हुआ, और उसके अन्तिम सूत्र में प्रवेश हो जाता है। वे परमपिता

परमात्मा अनन्त मानो यज्ञो ब्रह्म याग उसे कहते है जो एक दूसरे में प्रतिभाषित हो रहा है। एक दूसरे में ओत प्रोत की जो भावना है अथवा वेद याग का एक स्वरूप माना गया है। जैसे हमारे यहां, आचार्य जनों ने, अपना मन्तव्य देते हुए कहा है, अपना विचार देते हुए कहा है, कि हम प्रत्येक वस्तु और प्रत्येक अणु और परमाणु को, एक दूसरे में प्रवेश होता हुआ, एक माला के रूप में दृष्टिपात करते रहते हैं। क्योंकि माला विशुद्ध है, माला एक दूसरे से समन्वय करने वाली है। माला कहते ही उसे हैं, जिसका एक सूत्र हो, और मनके भिन्न भिन्न हो, और भिन्नता में एक माला के रूप में दृष्टिपात आने वाली हो। मानो उसको माला का रूप, माला की संज्ञा दी गई है।

मेरे पुत्रों! देखो, अश्वल अपने में शान्त हो गएं, कोई प्रश्न नही किया क्योंकि ब्रह्मयाग था क्योंकि याग भी हमारे यहाँ कई प्रकार के होते हैं, यह ब्रह्म विचारक जब अपनी स्थलियों पर विद्यमान होते हैं, तो यह अपने में याग करते रहते हैं, और वह मानो उसको ब्रह्म याग कहते हैं, ब्रह्मविचार को याग कहते हैं, मेरे प्यारे! देखो, जब ऋषि ने यह उत्तर दिया तो मौन हो गएं। महात्मा अर्द्धभाग ने प्रश्न करना चाहा, महात्मा अर्द्धभाग ने कहा हे प्रभु! मृत्यु की मृत्यु क्या है? तो मेरे प्यारे! जब यह प्रश्न किया उन्होंने तो उन्होंने अश्वाल ब्रव्हे कृतं देवाः जब अर्द्धभाग ने यह प्रश्न किया मृत्यु की मृत्यु तो याज्ञवल्क्य मुनि कहते हैं, क्या हे ऋषि! मत कहो मृत्यु की म्त्यु नहीं होती मृत्यु की मृत्यु ब्रह्म है। क्योंकि ब्रह्म के जानने वाले की मृत्यु नहीं हुआ करती। मेरे प्यारे! देखो, यहाँ भी ऋषि शान्त हो गया। शान्त हो जाने के पश्चात मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्मवेत्ताओ३म् का समाज शून्य हो गया शून्य हो जाने के पश्चात देखो, चाक्राणी गार्गी उपस्थित हुई और गार्गी ने नतमस्तिक हो करके कहा कि ब्रह्मवेत्ता मैं आपसे कुछ प्रश्न करना चाहती

हूँ। उन्होंने कहा हाँ देवी यदि मैं तुम्हारे प्रश्नों का उत्तर जानता हूँगा, तो अवश्य दे सकूंगा तो मेरे प्यारे! उन्होंने कहा सम्भवे ब्रहा सम्भवे लोकाम् साधनाम् भू वर्णासुतम् उन्होंने कहा कि हे देव! मैं साधना के सम्बन्ध में कुछ जानना चाहती हूँ, उन्होंने कहा हाँ दिव्या तुम प्रश्न करो उन्होंने कहा मेरे एक भुज में मानो कमान है, और उस पर तरकश मानो देखो, विद्यमान है। हे प्रभु! उस समान का ब्रहे हे प्रभु! उस कमान का ब्रहे उस मानो देखो, तरकश का मानो कौन सा लक्ष्य है? उन्होंने कहा हे देवी! प्राण रूपी कमान पर मन रूपी तरकश विद्यमान है, उसका जो लक्ष्य है वह ब्रह्म है। ब्रह्म को जानने वाला ही मन और प्राण को दोनों को एक सूत्र में लाने का प्रयास करता है। क्योंकि मन और प्राण का ही विभाजन हो रहा है। संसार में यह जो ब्रह्माण्ड जितना दृष्टिपात आ रहा है।

तो विचार आता रहता है, मुनिवरों! देखो, याग के ऊपर ऋषि मुनियो ने बड़े अनुष्ठान किए हैं। याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने तो मानो शतपथ ब्राह्मण में ब्राह्मण की विवेचना करते हुए कह कि ब्राह्मण वही है, जो मानो देखो, ब्रह्म याग में परिणित होता रहता है और ब्रह्मयागां ब्रह्मो कृतं देवः और स्वयं को ब्रह्मयागी बना देता है। तो वह ब्रह्मं ब्रहे मानो देखो, वह ब्राह्मण कहलाता है। याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने, बेटा! अपनी लोकोक्तियाँ प्रगट करते हुए कहा कि हमें याज्ञिक बनना चाहिए।

जब कोई निमटारा नहीं हो सका तो दोनों बेटा! रात्रि ब्रहे! रात्रि का काल समाप्त हो गया सूर्य उदय होने लगा दोनों ने अपने अपने आसन को त्याग करके बेटा! देखो, अपनी क्रियाओ३म् से, शरीरिक क्रियाओ३म् से निवृत्त हो करके उनके यहाँ जहाँ जहाँ नाना प्रकार के ब्रह्मवेत्ता विद्यमान होते थे उनकी सभा में वहाँ उनके यहाँ एक भौतिक याग भी प्रारम्भ होता और वही ब्रह्मवेत्ता ब्रह्म याग की अपने में चर्चाएं करते रहे। तो राजा जनक

उनकी पत्नि प्रातः कालीन अपने क्रियाओ३म् से निवृत्त हो करके बेटा! अपनी यज्ञशाला में पहुंचे और यज्ञशाला में उन्होंने अपने में समिधान करते हुए अग्न्याधान करते हुए उन्होंने बेटा! अग्नम ब्रह्मा कृतं देवा याग प्रारम्भ किया। जब याग प्रारम्भ किया याग होते हुए मेरे प्यारे! देखो, वहाँ महर्षि याज्ञवल्कय मुनि महाराज सबसे ऊर्ध्वा आसन पर विद्यमान थे। महात्मा अर्द्धभाग, महर्षि प्रव्हाण, महर्षि शिलक, दालभ्य, महात्मा दिग्ध और उनके पुरोहित देखो, महाराजा अशवह और भी नाना ऋषिवर विद्यमान थे जैसे ब्रह्मचारी कवन्धि, ब्रह्मचारी रोहिणी कृत्तिका, ब्रह्मचारी सुकेता और भी नाना ऋषिवर अपने आसनों पर विद्यमान थे परन्तु देखो, सबसे ऊर्ध्वा आसन पर महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज विद्यमान थे। मेरे पुत्रों! जैसे उन्होंने याग प्रारम्भ किया तो वह अपने में मौन रहे और अपने में यह निर्णय किया कि आज हम कोई प्रश्न आचार्य से नहीं करेंगें। मेरे प्यारे! उनका भौतिक याग, अग्निहोत्र जैसे ही समाप्त हुआ समाप्त होने के पश्चात राजा जनक अपने में मौन है और उनकी पत्नि भी मौन है। मेरे पुत्रों! देखो, महर्षि याज्ञवल्वय मुनि महाराज व अपने आसन से कहा क्या कोई भी यजम् ब्रह्मा, यज्ञमान कोई भी प्रश्न कर सकते हैं उसका उत्तर दूंगा।

विचार क्या है बेटादेखो !, चाक्राणी के शब्दों मेंओत प्रोत की चर्चा करने , !के लिए याज्ञवल्क्य मुनि महाराज और चाक्राणी इन दोनों का मुनिवरों देखो, संवाद हो रहा था ,ये ब्रह्म याग हो रहा है ,राजा जनक की सभा में , ब्रह्म की चर्चा हो रही है उस ब्ऱ्ह्म की चर्चा में ही मेरे पुत्रोंदेखो !, ओत प्रोत की चर्चा हो रही है तो विचार क्या मानो देखो, वह जो मेरा प्यारा प्रभु है जो संसार का रचयिता है मेरे प्यारेदेखो !, यह शून्य बिन्दु में जगत समाहित हो गया हैपरन्तु देखो ,ये शून्य बिन्दु बन गया ,, जब इसमें उग्र

गतियां आती हैं !एक दूसरे में पुनः बेटा ,माणुएक दूसरा पर !तो बेटा , आज मुझे !जागरूक हो जाता है। ये चर्चाएं मैं कल प्रगट करूंगा बेटा विचार विनिमय क्या आज का विचार ये ,इतना समय आज्ञा नहीं दे रहा है सृष्टि का वर्णन मानो देखो ,यह चारों प्रकार की !है कि बेटा, ओत प्रोत हो रहा है। मेरे प्यारेदेखो !, जड़वत में ये जो जड़ सृष्टि है ,यह अण्डज में है , देखो !अण्डज मुनिवरों, जंगम में हैउद्भिज में ओत !और जंगम मुनिवरों , देखो !प्रोत हो रही है। और मुनिवरों, यह मानो देखो, पृथ्वी में ओर पृथ्वी आपो मेंदेखो !और आपो मुनिवरों ,, इस अग्नि में और अग्नि वायु में वायु अन्तरिक्ष में और अन्तरिक्ष मेरे प्यारेवह महतत्व शून्य बिन्दु में प्रवेश कर ! देखो !जाता है। तो मेरे प्यारे, आज का विचार क्याकि हम परमपिता , अपनी उड़ान !परमात्मा के इस ज्ञान ओर विज्ञान में जगत के ऊपर बेटा ये संस ,उड़ते चले जाएंार बेटाभिन्न भिन्न प्रकार ,भिन्न भिन्न रूपों में ! आज मैं कल्पना में तो ,कल्पना की गई !कल्पना वादियों में बेटा ,की विचार केवल इतना ही है कि हम परमपिता परमात्मा की ,नही पहुंचा हूँ देव की महिमा का गुणगान गाते हुए उस परमपिता ,आराधना करते हुए परमात्मा के अनन्तमयीपर विचार ओर कल्पना ज्योतिर्मयी ब्रह्माण्ड के ऊ , करना हमारा कर्तव्य है।

प्रातःकाल का समय था प्रातःकाल में बेटाब्रह्मचारी अपनी पंक्तियों में ! क्या जब वह ,मुझे कुछ ऐसा स्मरण आ रहा है !विद्यमान थे। मेरे पुत्रों देखो, जब वह याज्ञवल्क्य मुनि महाराज के यहां नाना ब्रह्मचारी अध्ययन करते थे। तो मेरे प्यारेदेखो !, याज्ञवल्क्य मुनि महाराज वेद का अध्ययन

करते और अध्ययन करतेऋषि ऋण के पश्चात ब्रह्म याग के पश्चात वे मेरे ,
देखो !प्यारे, एक देव याग में परिणीत हो गये और जब वे देव याग में
परिणीत हो गए देवताओम् के सम्मुख व3िद्यमान हो करके यागाम् ब्रह्मणां
ब्रह्मे व्रतम् देवा वाचन्नमं ब्रह्मा कृति लोकाःम् मेरे पुत्रोंदेखो !, जब वह अपने
में अध्ययन कर रहे थे। अध्ययनशील होते हुए प्रातःकाल का समय था वेदों
में वेदमन्त्रों का उद्घोष कर रहे थे। ब्रह्मचारियों ने कहा प्रभु यह क्या कर रहे
हो आप हमें कुछ उपदेश दीजीए। तो मेरे पुत्रोंयाज्ञवल्क्य मुनि महाराज !
आज का मैं न्यौदा में मन्त्रों का अध्ययन कर !ने कहा क्या हे ब्रह्मचारियों
रहा था उस अध्ययन में एक वाक् आया वेदमन्त्र आया तपम् चरिष्यम् ब्रह्मा
तपो वाचन्नमं ब्रह्मा तपम् वसुन्धरा तपम् दिव्याम् सूर्याणि गच्छतम् मेरे प्यारे !
देखो, महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि बोले कि आज का जब मैं वेद का अध्ययन
कर रहा था मन्त्रों में आ रहा था कि मानव को तपना चाहिए। और मैं तप
की महिमा का जब वर्णन मानो वैदिक साहित्य में आता रहा तो मेरा
अन्तरात्मा गद्गद हो गया। हे ब्रह्मचारियोंहो रही है कि मैं मेरी इच्छा ऐसी !
भी तप करने के लिए चला जाऊं। क्योंकि परमपिता परमात्मा जब तप में
जो सृष्टि का ,ही वह रहते हैं। तो इस सृष्टि का निर्माण हो जाता है
और तप कहते हैं। उग्र क्रिया का नाम तप है। जब ,वह तप है ,नियन्ता है
मानो परमपिता परमात्मा की उग्र क्रिया बनी उग्रता में यह संसार रचित हो
गया नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों में अनन्तमयी ब्रह्माण्ड में यह विभक्त
हो गया इसी प्रकार मानव को अपने में तपस्वी बनना चाहिए। और तप
करने के पश्चात मानो अपने जीवन का मन्थन करना चाहिए। मेरे पुत्रों !

याज्ञवल्क्य मुनि बोले कि हे ब्रह्मचारयोंमेरी इच्छा ऐसी बनी है कि तुम ! अपने विद्यालय को ऊर्ध्वा में ले जाओ। और मैं तप करने के लिए जा रहा हूँ क्योंकि मेरा कर्तव्य है कि मैं तप करूं।